नई समाजवादी क्रान्ति का उद्घोषक

बिगुल

मासिक समाचारपत्र • पूर्णांक 129 • वर्ष 11 अंक 3
अप्रैल 2009 • तीन रुपये • 12 पृष्ठ

न कोई नारा, न कोई मुद्दा
चुनाव नहीं ये लुटेरों के गिरोहों के बीच की जंग है

सम्पादक मण्डल

लोकसभा चुनाव की महानौटंकी देश में चालू हो गयी है। चुनावी महारथियों की हुंकारें शुरू हो गयी हैं। एक-दूसरे को चुनावी जंग में धूल चटाने के ऐलान के साथ ही चुनावी हम्माम में एक-दूसरे को नंगा करने की होड़ भी मची हुई है।

जो चुनावी नज़ारा दिख रहा है, उसमें तमाम जोड़-तोड़, तीन-तिकड़म और सिनेमाई ग्लैमर की चमक-दमक के बीच यह बात बिल्कुल साफ उभरकर सामने आ रही है कि किसी भी चुनावी पार्टी के पास जनता को लुभाने के लिये न तो कोई मुद्दा है और न ही कोई नारा। ज़ुबानी जमा खर्च और नारे के लिये भी छँटनी, तालाबन्दी, महँगाई, बेरोज़गारी कोई मुद्दा नहीं है। कांग्रेस बड़ी बेशर्मी के साथ 'इंडिया शाइनिंग' की ही तर्ज़ पर 'जय हो' का राग अलापने में लगी हुई है, तो भाजपा उसकी पैरोडी करते हुए यह भूल जा रही है कि पाँच वर्ष पहले वह भी देश को चमकाने के ऐसे ही दावे कर रही थी। विधानसभा चुनावों में आतंकवाद के मुद्दा न बन पाने के कारण भाजपा न तो उसे ज़ोरशोर से उठा पा रही है और न ही छोड़ पा रही है। वरुण गाँधी के ज़हरीले भाषण का पहले तो उसने विरोध किया और फिर वोटों के ध्रुवीकरण के लालच में उसे भुनाने में जुट गयी।

उदारीकरण-निजीकरण की विनाशकारी नीतियाँ किसी पार्टी के लिये मुद्दा नहीं हैं क्योंकि इन नीतियों को लागू करने पर सबकी आम राय है। पिछले दो दशक के दौरान केन्द्र और राज्यों में संसदीय वामपन्थियों समेत सभी पार्टियाँ या गठबन्धन सरकारें चला चुके हैं या चला रहे हैं और सबने इन्हीं नीतियों को आगे बढ़ाया है। देशी-विदेशी पूँजी की खिदमत करने के मामले में राष्ट्रीय या बड़ी चुनावी पार्टियाँ ही नहीं क्षेत्रीय स्तर के क्षत्रप भी होड़ मचाये हुए हैं।

संसदीय वामपन्थी अवसरवाद के अपने पिछले रिकार्ड को भी धता बताते हुए मायावती से लेकर जयललिता जैसी महाभ्रष्ट और फासिस्ट नेताओं से लेकर उदारीकरण की नीतियों के पोस्टरब्वाय चन्द्रबाबू नायडू तक के साथ मोर्चा बनाये घूम रहे हैं।

यह बात बिल्कुल साफ हो चुकी है कि देश को चलाने के सवाल पर किसी पार्टी की बुनियादी नीतियों में कोई अन्तर नहीं है। तभी तो बड़े आराम से इस गठबन्धन के दल उछलकर उस गठबन्धन में शामिल हो जा रहे हैं।

तब फिर सवाल उठता है कि चुनाव किस बात का? चुनाव में फैसला महज़ इस बात का होना है कि अगले पाँच साल तक सिंहासन पर बैठकर जनता को डसने और खून चूसने का अधिकार कौन हासिल करेगा।

देश का पूँजीवादी जनतंत्र आज पतन के उस मुकाम पर पहुँच चुका है, जहाँ अब इस व्यवस्था के दायरे में ही सही, छोटे-मोटे सुधारों के लिये भी आम जनता के सामने कोई विकल्प नहीं है। अब तो जनता को इस चुनाव में चुनना सिर्फ यह है कि लुटेरों का कौन सा गिरोह उन पर सवारी गाँठेगा। विभिन्न चुनावी पार्टियों के बीच इस बात के लिये चुनावी जंग का फैसला होना है कि कुर्सी पर बैठकर कौन देशी-विदेशी पूँजीपतियों की सेवा करेगा। कौन मेहनतकश अवाम को लूटने के लिये तरह-तरह के कानून बनायेगा। कौन मेहनतकश की आवाज कुचलने के लिये दमन का पाटा चलायेगा।

ऐसे में मेहनतकश अवाम के सामने विकल्प क्या है? 'बिगुल' के पन्नों पर हम बार-बार यह सच्चाई दुहराते रहे हैं कि विकल्प एक ही है—मौजूदा पूँजीवादी जनतंत्र का नाश और उसके स्थान पर मेहनतकशों के सच्चे जनतंत्र की स्थापना। केवल तभी मेहनतकशों को देशी-विदेशी पूँजी की गुलामी से सच्ची आज़ादी मिलेगी और पूँजीवादी जनतंत्र का पहाड़ जैसा बोझ छाती से हटाया जा सकेगा। मौजूदा पूँजीवादी जनतंत्र को उखाड़ फेंककर ही एक ऐसा समाज बनाया जा सकता है, जिसमें उत्पादन, राजकाज और पूरे समाज पर मेहनतकश अवाम का नियंत्रण कायम हो। केवल तभी भूख, बेकारी, भ्रष्टाचार से मुक्त एक नया मानवीय समाज बनाया जा सकता है।

मेहनतकश अवाम के हरावलों को मौजूदा लोकसभा चुनाव के मौके पर पूँजीवादी जनतंत्र का ठोस ढंग से भण्डाफोड़ करने के साथ ही साथ ही आम मेहनतकशों के बीच यह विकल्प भी पेश करना होगा। भले ही आज आम मेहनतकश अवाम को यह असम्भव सा लगे लेकिन हमें उनके दिलों में यह विश्वास जमाना ही होगा कि यह सम्भव है और यही एकमात्र रास्ता है।

आर्थिक संकट का सारा बोझ मज़दूरों पर
देश भर में हो रही है मज़दूरों की छँटनी

विश्वव्यापी आर्थिक संकट की लपटें पूरे भारत में तेज़ी से फैल रही हैं और सबसे ज्यादा मज़दूरों को अपनी चपेट में ले रही हैं। अन्तहीन मुनाफाखोरी की हवस में पागल पूँजीपतियों द्वारा मेहनतकश जनता की बेरहम लूट और बेहिसाब उत्पादन से पैदा हुए इस संकट की मार मेहनतकश जनता को ही झेलनी पड़ रही है। सरकार के श्रम विभाग के सर्वेक्षण की रिपोर्ट के अनुसार पिछले वर्ष के अन्तिम तीन महीनों में 5 लाख से अधिक मज़दूरों की छँटनी की जा चुकी थी। यह एक प्रकार की नमूना रिपोर्ट थी, जिससे मेहनतकशों पर पड़ने वाले छँटनी-तालाबन्दी के भयावह असर का केवल अनुमान ही लगाया जा सकता है।

भारत सरकार के श्रम विभाग द्वारा आठ औद्योगिक सेक्टरों (खनन, कपड़ा और वस्त्र, धातु और धातु के उत्पाद, ऑटोमोबाइल, हीरे-जवाहरात और गहनों से संबंधित उद्योग, निमार्ण, परिवहन और सूचना तकनोलॉजी के बीपीओ उद्योग) का सर्वे किया गया। इस सर्वे में 11 राज्य और केन्द्र शासित प्रदेशों के 20 औद्योगिक केन्द्रों की दस या अधिक मज़दूरों वाली 2581 इकाइयों को शामिल किया गया। सितम्बर 2008 में इन इकाइयों में 1 करोड़ 62 लाख मज़दूर काम करते थे जबकि दिसंबर 2008 में यह संख्या घटकर 1 करोड़ 57 लाख पर आ गई। मात्र तीन महीनों के भीतर ही 5 लाख मज़दूरों का रोजगार छिन जाना कोई छोटी बात नहीं है। और फिर यह भी हम साफ देख सकते हैं कि इस में सर्वे देश की कुल औद्योगिक इकाइयों के एक छोटे हिस्से को ही शामिल किया गया है। असल में इस दौरान बेरोजगार हुए मज़दूरों की संख्या बहुत अधिक हो सकती है। इस बारे में देश के कोने कोने से खबरें प्राप्त हो रही हैं। भले ही सरकार, पूँजीवादी मीडिया तथा विभिन्न पूँजीवादी सर्वे एजेंसियों आदि द्वारा एकत्रित आँकड़ों से पूरी तस्वीर देख पाना संभव नहीं होता। जिस देश में अधिकतर मज़दूर बिना किसी लिखत-पढ़त के काम करते हों वहाँ उनके काम से निकाले जाने के सही आँकड़े मिलने का तो सवाल ही पैदा नहीं होता, लेकिन हालात का अंदाजा तो लगाया ही जा सकता है।

आइये, कुछ अन्य जगहों से प्राप्त जानकारियों पर भी नज़र डालें।

निर्यात आधारित उद्योग में बहुत बड़े स्तर पर छँटनी हुई है। कॉमर्स सेक्रेटरी जी.के.पलाई के

(पेज 5 पर जारी)

भीतर के पन्नों पर

मेट्रो मज़दूरों का संघर्ष – पेज 3
नरेगा में भ्रष्टाचार और घोटाले पर रिपोर्ट – पेज 4-5
मन्दी के विरोध में दुनियाभर में फैलता जनआक्रोश – पेज 7
जनवादी जनतन्त्र : पूँजीवाद के लिए सबसे अच्छा राजनीतिक खोल – पेज 8
एक राजकीय उपक्रम के मज़दूरों द्वारा चीन की कथित कम्युनिस्ट पार्टी को लिखा पत्र – पेज 9
नताशा – एक महिला बोल्शेविक संगठनकर्ता – पेज 10
गरीब किसानों-मजदूरों के 'राहुल बाबा' – पेज 11

बजा बिगुल मेहनतकश जाग, चिंगारी से लगेगी आग!

आपस की बात

साथी अरविन्द के अचानक निधान पर गहरा दुःख...

कॉ. अरविन्द की स्मृति को अक्षुण्ण रखने और सामाजिक परिवर्तन के जिन वैचारिक-सांस्कृतिक कार्यभारों के प्रति वे समर्पित थे उन्हें आगे बढ़ाने के लिए 'अरविन्द स्मृति न्यास' और 'अरविन्द मार्क्सवादी अधययन संस्थान' स्थापित करने का आप लोगों का निर्णय सराहनीय है।

–डॉ. कपिलेश भोज,
अल्मोड़ा (उत्तराखण्ड)

संघर्ष की दिशा दे रहे हैं लेख

साथी जी, लाल सलाम

आशा है आप कुशलतापूर्वक होंगे। आप द्वारा हमारे कार्यालय लाइब्रेरी में बिगुल लगातार आ रहा है। बिगुल में दिए जा रहे लेख व कविताएँ स्मरण योग्य हैं तथा लेख संघर्ष की दिशा दे रहें। नई समाजवादी क्रान्ति की अलख जगाओ, मन्दी की मार, जनता के अधिकारों पर हमला फिलिस्तीनी जनता का संघर्ष, चीन की मेहनतकश जनता, नताशा की जीवनी इत्यादि-इत्यादि लेख। बड़े मार्मिक लगे, कवि जवालामुखी।

मजदूर कार्यालय में मजदूर गरीब व शोषित-पीड़ित लोगों का आना-जाना लगा रहता है तथा बिगुल के लेख व कविताओं का भी विचार मंथन आपस में किया जाता है। कार्यालय गरीबों व खड्डा बस्ती के नज़दीक है।

बिगुल भेजने का फिर आपको धन्यवाद।

आपका साथी

–महेश महर्षि
जिला मजदूर कार्यालय,
शुगर मिल गेट के सामने,
श्रीगंगानगर-335001

खराब नेता

कितना खराब नेता है। भइया
ये तो बहुत घूस खोर है। भइया
ये नियमों का उल्लघन करता
इसे ऊँचे पद से हटाओ भइया
अपना भारत को चमकाओ भइया
कितना खराब नेता है भइया
ये तो बहुत घूसखोर है। भइया
ये अपने देश के लिए कुछ नहीं करता है।
और अपने देश को अमेरिका के हवाले करता है। भइया
समाज के लिए पैसा आता है। भइया
पर गाँव-गाँव तक आते-आते
खब जाता है भइया।

–सागर
अपना घर (हास्टल)
मकान नं. बी 135/8
प्रधान गेट नानकारी
आई आई टी कानपुर नगर

आज घोषणा करने का दिन
हम भी हैं इन्सान
हमें चाहिए बेहतर दुनिया
करते हैं ऐलान!

अन्तरराष्ट्रीय मज़दूर दिवस

के अवसर पर
मई दिवस के महान शहीदों
को श्रद्धांजलि देने के लिए

1 मई को सुबह 9 बजे

ई.डब्ल्यू.एस. कालोनी,
नजदीक वर्द्धमान मिल
चण्डीगढ़ रोड, लुधियाना
में हो रही

आम सभा

में पहुँचें।
अपीलकर्ता
कारखाना मज़दूर यूनियन, लुधियाना
सम्पर्क: राजविन्दर: 9888655663
नौजवान भारत सभा
सम्पर्क: परमिन्दर: 9888696323

नींद से जागो

सूली चढ़कर शहीद भगत ने दुनिया को ललकारा है,
नींद से जागो ऐ मज़लूमो सारा देश तुम्हारा है।
जीवनभर जो वस्त्र बनाया फटी बहन की साड़ी है,
सारी उम्र जो बैठ के खाया उसकी बंगला गाड़ी है।
जो काम करे वो रोटी खाये यही हमारा नारा है,
नींद से जागो ऐ मज़लूमो सारा देश तुम्हारा है।
नदी का सीना चीरके तुमने ऊर्जा बाँध बनाया है,
अपनी मेहनत का फल तुमने कितना अच्छा पाया है।
उनके महल में रात भी दिन है तेरा घर अंधियारा है,
नींद से जागो ऐ मज़लूमो सारा देश तुम्हारा है।
खाल पहन कर इंसानों की चेहरा वही दिखाते हैं,
मखमल का है बिस्तर उनका सोना चाँदी खाते हैं।
भूख-गरीबी और अशिक्षा हिस्सा यही तुम्हारा है,
नींद से जागो ऐ मज़लूमो सारा देश तुम्हारा है।
इंकलाब के नारे को हम मंजिल तक ले जायेंगे,
भूख से मरने से अच्छा है जालिम से टकरायेंगे।
गुरबत ने अब कफन बाँधा कर दौलत को ललकारा है,
नींदे से जागो ऐ मज़लूमो सारा देश तुम्हारा है।
समाजवाद के परचम को हम दुनिया में लहरायेंगे,
अपने हिस्से की रोटी को छीन के उनसे खायेंगें।
ताज यही है चाहत अपनी सपना यही हमारा है,
नींद से जागो ऐ मज़लूमो सारा देश तुम्हारा है।

– टी.एम. अंसारी
शक्ति नगर, लुधियाना।

असली चुनाव
इस या उस
पूंजीवादी चुनावी पार्टी
के बीच नहीं
बल्कि
इंकलाबी राजनीति
और पूंजीवादी राजनीति
के बीच है।
चुन लो
चुनावी मृगमरीचिका में
जीना है
या
इंकलाब की तैयारी की
कठिन राह पर चलना है?

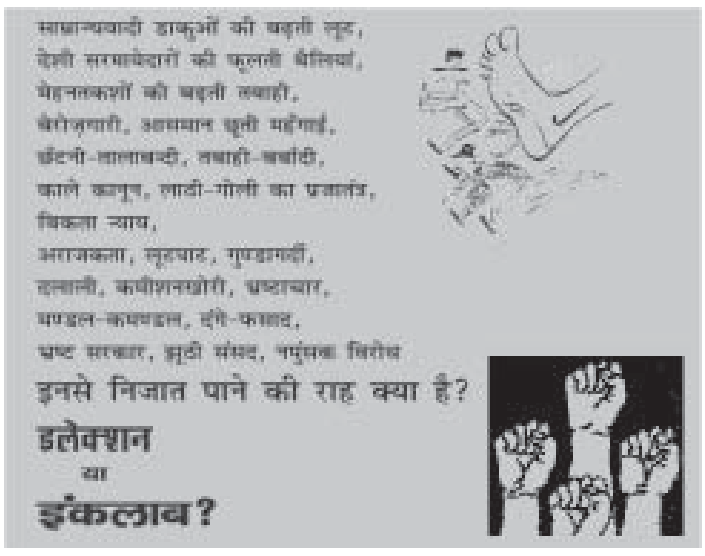

बिगुल

'जनचेतना' की सभी शाखाओं पर उपलब्ध :

1. **डी-68, निरालानगर, लखनऊ-226020**
2. **जनचेतना स्टाल, काफी हाउस बिल्डिंग, हज़रतगंज, लखनऊ (शाम 5 से 8 बजे तक)**
3. **जाफरा बाजार, गोरखपुर-273001**
4. **जनचेतना सचल स्टाल (ठेला) चौड़ा मोड़, नोएडा (शाम 5 से 8)**

मार्च 2009 अंक में घोषणापत्र भूलवश प्रकाशित नहीं हो सका था। इसलिए इसे इस अंक में प्रकाशित किया जा रहा है।

घोषणापत्र का प्रपत्र : प्रपत्र 4 (नियम 8 के अन्तर्गत)

समाचार पत्र का नाम	नई समाजवादी क्रान्ति का उद्घोषक बिगुल
पत्र की भाषा	हिन्दी
आवर्तिता	मासिक
पत्र का खुदरा बिक्री मूल्य	तीन रुपये
प्रकाशक का नाम	डॉ. दूधनाथ
राष्ट्रीयता	भारतीय
पता	69, बाबा का पुरवा, पेपर मिल रोड, निशातगंज, लखनऊ
प्रकाशन का स्थान	निशातगंज, लखनऊ
मुद्रक का नाम	डॉ. दूधनाथ
पता	69, बाबा का पुरवा, पेपर मिल रोड, निशातगंज, लखनऊ
मुद्रणालय का नाम	वाणी ग्राफिक्स, अलीगंज, लखनऊ
सम्पादक का नाम	डॉ. दूधनाथ, सुखविन्दर
राष्ट्रीयता	भारतीय
पता	69, बाबा का पुरवा, पेपर मिल रोड, निशातगंज लखनऊ
स्वामी का नाम	डॉ. दूधनाथ
राष्ट्रीयता	भारतीय

मैं दूधनाथ, यह घोषणा करता हूँ कि उपर्युक्त तथ्य मेरी अधिकतम जानकारी के अनुसार सत्य हैं।

हस्ताक्षर
(दूधनाथ)
प्रकाशक, मुद्रक, स्वामी

बिगुल का स्वरूप, उद्देश्य और ज़िम्मेदारियाँ

1. 'बिगुल' व्यापक मेहनतकश आबादी के बीच क्रान्तिकारी राजनीतिक शिक्षक और प्रचारक का काम करेगा। यह मज़दूरों के बीच क्रान्तिकारी वैज्ञानिक विचारधारा का प्रचार करेगा और सच्ची सर्वहारा संस्कृति का प्रचार करेगा। यह दुनिया की क्रान्तियों के इतिहास और शिक्षाओं से, अपने देश के वर्ग संघर्षों और मज़दूर आन्दोलन के इतिहास और सबक़ से मज़दूर वर्ग को परिचित करायेगा तथा तमाम पूँजीवादी अफ़वाहों-कुप्रचारों का भण्डाफोड़ करेगा।

2. 'बिगुल' देश और दुनिया की राजनीतिक घटनाओं और आर्थिक स्थितियों के सही विश्लेषण से मज़दूर वर्ग को शिक्षित करने का काम करेगा।

3. 'बिगुल' भारतीय क्रान्ति के स्वरूप, रास्ते और समस्याओं के बारे में क्रान्तिकारी कम्युनिस्टों के बीच जारी बहसों को नियमित रूप से छापेगा और स्वयं ऐसी बहसें लगातार चलायेगा ताकि मज़दूरों की राजनीतिक शिक्षा हो तथा वे सही लाइन की सोच-समझ से लैस होकर क्रान्तिकारी पार्टी के बनने की प्रक्रिया में शामिल हो सकें और व्यवहार में सही लाइन के सत्यापन का आधार तैयार हो।

4. 'बिगुल' मज़दूर वर्ग के बीच लगातार राजनीतिक प्रचार और शिक्षा की कार्रवाई चलाते हुए सर्वहारा क्रान्ति के ऐतिहासिक मिशन से उसे परिचित करायेगा, उसे आर्थिक संघर्षों के साथ ही राजनीतिक अधिकारों के लिए भी लड़ना सिखायेगा, दुअन्नी-चवन्नीवादी भूजाछोर "कम्युनिस्टों" और पूँजीवादी पार्टियों के दुमछल्ले या व्यक्तिवादी-अराजकतावादी ट्रेडयूनियनबाजों से आगाह करते हुए उसे हर तरह के अर्थवाद और सुधारवाद से लड़ना सिखायेगा तथा उसे सच्ची क्रान्तिकारी चेतना से लैस करेगा। यह सर्वहारा की कतारों से क्रान्तिकारी भरती के काम में सहयोगी बनेगा।

5. 'बिगुल' मज़दूर वर्ग के क्रान्तिकारी शिक्षक, प्रचारक और आह्वानकर्ता के अतिरिक्त क्रान्तिकारी संगठनकर्ता और आन्दोलनकर्ता की भी भूमिका निभायेगा।

नई समाजवादी क्रान्ति का उद्घोषक बिगुल

सम्पादकीय कार्यालय : 69, बाबा का पुरवा, पेपरमिल रोड, निशातगंज, लखनऊ-226006
सम्पादकीय उपकार्यालय : जनगण होम्यो सेवासदन, मर्यादपुर, मऊ
दिल्ली सम्पर्क : बी-100, मुकुन्द विहार, करावलनगर दिल्ली-94 फोन : 011-65976788
ईमेल : bigul@rediffmail.com

मूल्य : एक प्रति–रु. 3/- वार्षिक–रु. 40.00 (डाक ख़र्च सहित)

दिल्ली मेट्रो प्रबन्धन के ख़िलाफ़ एकजुट हो रहे हैं सफ़ाईकर्मी

दिल्ली मेट्रो के सफ़ाईकर्मियों ने मेट्रो प्रशासन के दमन-उत्पीड़न के ख़िलाफ़ आवाज़ बुलन्द करने की शुरुआत कर दी है। 25 मार्च को मेट्रो कामगार संघर्ष समिति के नेतृत्व में न्यूनतम मज़दूरी, साप्ताहिक छुट्टी, ई.एस.आई., पी.एफ. जैसे बुनियादी क़ानूनी अधिकारों के लिए मेट्रो सफ़ाईकर्मियों ने मेट्रो भवन पर चेतावनी प्रदर्शन किया।

पूरा दिल्ली मेट्रो मज़दूरों के खून-पसीने और हड्डियों की नींव पर खड़ा किया गया है लेकिन इसके बदले में मज़दूरों को न्यूनतम मज़दूरी, साप्ताहिक छुट्टी, पी.एफ़, ई.एस.आई. और यूनियन बनाने के अधिकार जैसे बुनियादी अधिकारों से भी वंचित रखा गया है। श्रम क़ानूनों की खुलेआम धज्जियाँ उड़ायी जाती हैं। हालाँकि मेट्रो स्टेशनों और डिपो के बाहर मेट्रो प्रशासन ने एक बोर्ड ज़रूर लटका दिया है कि 'यहाँ सभी श्रम क़ानून लागू किये जाते हैं'। चाहे मेट्रो में काम करने वाले सफ़ाई मज़दूर हों या फिर निर्माण मज़दूर, सभी से जानवरों की तरह हाड़तोड़ काम लिया जाता है और उन्हें कई बार साप्ताहिक छुट्टी तक नहीं दी जाती है। पी.एफ़ या ई.एस.आई. की सुविधा तो बहुत दूर की बात है। ऊपर से यदि कोई मज़दूर इसके ख़िलाफ़ आवाज़ उठाता है तो उसे तरह-तरह से प्रताड़ित किया जाता है या फिर उसे निकालकर बाहर ही फेंक दिया जाता है।

- **मेट्रो कामगार संघर्ष समिति के नेतृत्व में धरना**
- **मेट्रो भवन का गेट जाम किया**
- **सफ़ाईकर्मियों को धमका रहे हैं ठेकेदार**

मेट्रो कामगार संघर्ष समिति इस खुले शोषण के ख़िलाफ़ मेट्रो कामगारों को संगठित करने में जुटी हुई है। पिछले कुछ महीनों के दौरान समिति ठेकेदारों और मेट्रो प्रशासन की खुली धमकियों और तमाम किस्म के रोड़े अटकाने के बावजूद मज़दूरों के बीच उनके अधिकारों का प्रचार-प्रसार किया है और लगातार मेट्रो प्रशासन पर दबाव बनाये हुए है।

समिति द्वारा सूचना के अधिकार क़ानून के तहत पूछे गये सवाल के जवाब में डी.एम.आर.सी ने लिखित रूप से यह स्वीकार किया था कि श्रम क़ानूनों का अमल सुनिश्चित कराना प्रथम नियोक्ता का काम है। मेट्रो में काम करने वाले मज़दूरों का प्रथम नियोक्ता वही है और मज़दूरों को उनके क़ानूनी अधिकार दिलाने की ज़िम्मेदारी भी मेट्रो प्रशासन की ही है। इसके बावजूद जब 25 मार्च को मेट्रो के सफ़ाईकर्मियों ने मेट्रो कामगार संघर्ष समिति के नेतृत्व में कनाट प्लेस स्थित मेट्रो भवन पर शान्तिपूर्ण प्रदर्शन किया।

मेट्रो के सफ़ाईकर्मियों की प्रमुख मांगें हैं:

1. नए क़ानून के तहत न्यूनतम दैनिक मज़दूरी 186 रु. दी जाए (वर्तमान मज़दूरी मात्र 96 रु. है)
2. पी.एफ. नंबर एवं ई.एस.आई. कार्ड की सुविधा दी जाए।
3. वेतन के साथ साप्ताहिक छुट्टी दी जाए।
4. न्यूनतम मज़दूरी क़ानून और ठेका क़ानूनों का पालन किया जाए।

ये सभी बिल्कुल जायज़ और

नई दिल्ली के बारहखम्भा रोड स्थित मेट्रो भवन पर मेट्रो कामगार संघर्ष समिति के नेतृत्व में प्रदर्शन करते सफाई कर्मी

कानूनी माँगें हैं। लेकिन प्रदर्शन के बाद जब मज़दूरों ने अपना ज्ञापन डी.एम.आर.सी को सौंपना चाहा, तो डी.एम.आर.सी ने हिटलर की राह पर चलते हुए ज्ञापन लेने से इन्कार कर दिया और कहा कि सफ़ाईकर्मियों से उसका कोई वास्ता नहीं है क्योंकि वे ठेकेदार के कर्मचारी हैं। डी.एम.आर.सी. के इस रवैये ने यह स्पष्ट कर दिया कि उसने ठेकेदारों के साथ अपवित्र गंठजोड़ क़ायम किया हुआ है और वह सफ़ाईकर्मियों को उनके बुनियादी हक़ दिलवाने का क़तई इच्छुक नहीं है।

ज्ञापन लेने से इन्कार के बाद सफ़ाईकर्मियों ने मेट्रो भवन का गेट जाम कर दिया और कहा कि वहाँ से तभी हटेंगे जब मेट्रो प्रशासन उनका ज्ञापन स्वीकार करे और दस दिन के भीतर उनकी माँगों पर कार्रवाई करने का आश्वासन दे। लगभग दो घण्टे तक मेट्रो भवन का मुख्य गेट जाम रहने के बाद सफ़ाईकर्मियों के जुझारू तेवर को देखते हुए डी.एम.आर.सी. को मजबूर होकर पुलिस के अधिकारियों की मध्यस्थता में एक ठेका कम्पनी के प्रतिनिधि से ज्ञापन स्वीकार कराना पड़ा। इस घटना से यह ज़ाहिर हो गया कि मज़दूर यदि अपनी माँगों के लिए एकजुटता का प्रदर्शन करें तो सरकार और मालिकान को झुकने पर मजबूर कर सकते हैं।

इस घटना के बाद ठेकेदारों के गुण्डों ने सफ़ाईकर्मियों को धमकाना शुरू कर दिया और उनसे एक माफ़ीनामे पर दस्तख़त करने को कहा। लेकिन सफ़ाईकर्मियों ने उनका प्रतिरोध किया और दस्तख़त करने से इन्कार कर दिया। ठेकेदारों ने सफ़ाईकर्मियों के सामने यह लुकमा भी फेंकने की कोशिश की कि वे 200-400 रु. वेतन बढ़ाने पर मान जायें और संघर्ष में शामिल न हों।

मामले के न्यायालय में जाने की स्थिति से निबटने के लिए ठेकेदार झूठे वेतन रिकॉर्ड भी तैयार कर रहे हैं और मेट्रो प्रशासन भी पूरी बेशर्मी के साथ इन ठेकेदारों का साथ दे रहा है।

मेट्रो कामगार संघर्ष समिति ने भी मज़दूरों को एक बड़ी लड़ाई के लिए तैयार करने की कोशिशें तेज़ कर दी हैं।

– बिगुल संवाददाता

भोरगढ़, नरेला के कारख़ानों में मज़दूरों का बर्बर शोषण बेरोकटोक जारी है

मैं पिछले दो महीने से भोरगढ़ की दिल्ली वेल्डिंग कम्पनी में काम कर रहा हूँ, इसमें केबल (तार) बनता है। मैंने इन दो महीनों में ही इस इलाके में काम करने वाले मज़दूरों की जो हालत देखी वह बहुत ही खराब है। भोरगढ़ में अधिकतर प्लास्टिक लाइन की कम्पनियाँ हैं इसके अलावा बर्तन, गत्ता, रबर आदि की फ़ैक्ट्री हैं। सभी कम्पनियों में औसतन मात्र 8-10 लड़के काम करते हैं अधिकतर कम्पनियों में माल ठेके पर बनता है। छोटी कम्पनियों में मज़दूर हमेशा मालिक की नजरों के सामने होता है मज़दूर एक काम खत्म भी नहीं कर पाता है कि मालिक दूसरा काम बता देता हैं कि अब ये कर लेना। भोरगढ़ में जितनी भी फ़ैक्ट्रियाँ हैं उसमें अधिकतर प्रदूषण वाली (काला-पीला गन्दगी वाली) फ़ैक्ट्रियाँ हैं। सभी कम्पनियों में धूल-मिट्टी हमेशा उड़ती रहती है। मैं जिस कम्पनी में काम करता हूँ उसमें केबल की रबर बनाने में पाउडर (मिट्टी) का इस्तेमाल होता है। मिट्टी इतनी सूखी और हल्की होती है कि हमेशा उड़ती रहती है। आँखों से उतना दिखाई तो नहीं देता किन्तु शाम को जब अपने शरीर की हालत देखते हैं तो पूरा शरीर और सिर मिट्टी से भरा होता है। ये मिट्टी नाक, मुँह के जरिये फ़ेफ़ड़ों तक जाती है। इस कारण मज़दूरों को हमेशा टी.वी., कैंसर, पथरी जैसी गम्भीर बीमारियाँ होने का खतरा बना रहता है। जो पाउडर केबल के रबर के ऊपर लगाया जाता है उससे तो हाथ फ़ट कर काला-काला हो जाता है। जलन एवँ खुजली होती रहती है। इन सबसे सुरक्षा के लिए सरकार ने जो नियम (दिखावटी) बना रखे हैं जैसे कि नाक, मुँह ढँकने के लिए कपड़े देना, हाथों के लिए दस्ताने, शाम को छुट्टी के समय गुड़ देना आदि। इनमें से किसी भी नियम का पालन मालिक या ठेकेदार नहीं करता है। वह सभी नियम-कानून को अपनी जेब में रख कर चलता है। मजबूरन मज़दूर को इस गन्दगी से बचने के लिए खुद कम्पनी में एक सेट पुराना कपड़ा रखना पड़ता है। और काम के समय उसी को पहन कर काम करता है। उसके साफ़ कपड़े रोज गन्दे तो नहीं होते लेकिन रोज उसी गन्दे कपड़े को पहन कर काम करने से बीमारियों का खतरा और बढ़ जाता है। उस गन्दे कपड़े से अगर मालिक की कुर्सी या अन्य सामान साफ़ करिये तो कहेगा कि, गन्दा करेगा क्या, साफ़ कपड़े से साफ़ करो। किन्तु मज़दूर उसी तरह के गन्दे कपड़े पहनकर रोज काम करता है।

एक तो इन कम्पनियों में लंच एवं छुट्टी का कोई समय नहीं होता है अगर लंच का समय हो गया और आप काम कर रहे हैं तो ठेकेदार कहेगा अरे आध घण्टे बाद लंच कर लेना, ये काम जब तक खत्म हो जायेगा। छुट्टी के समय भी उसी तरह – इतना कर ले न, उसके बाद छुट्टी कर लेना। किन्तु अगर किसी दिन आप 10 मिनट लेट हो जाइये तो मालिक पूरा हिसाब पूछेगा कि क्यों लेट आये। यह कम्पनी है कोई धर्मशाला नहीं। यही हालत लगभग सभी फ़ैक्ट्रियों की है कही भी मज़दूरों की चिन्ता किसी मालिक, ठेकेदार को नहीं होती उसे सिर्फ़ मुनाफ़े की चिन्ता होती है।

एक अन्य सेन्चुरियन प्राईवेट लिमिटेड केबल कम्पनी एफ़-1775 में है। पता करने पर मालूम हुआ कि इस कम्पनी में सात लोगों को टी.बी. हो चुकी है। दिल्ली सरकार ने इन फ़ैक्ट्रियों को मुख्य दिल्ली से उजाड़कर भोरगढ़ में इसलिए बसाया था क्योंकि सरकार का कहना था कि इन फ़ैक्ट्रियों से निकलने वाली धुँआ, मिट्टी एवं शोर से इन इलाकों में रहने वाले लोगों (धन्नासेठों) का स्वास्थ्य खराब हो रहा है। लोगों को कई तरह की बीमारियाँ हो जाती हैं। इसलिए इन फ़ैक्ट्रियों को दिल्ली के बाहरी इलाकों में लगाओ। किन्तु इन्ही फ़ैक्ट्रियों के धूल-मिट्टी में सारा दिन काम करने वाले मज़दूरों की सरकार को कोई चिन्ता नहीं है।

कम मज़दूर होने के कारण इन फ़ैक्ट्रियों में मालिकों से मज़दूर अपनी कोई माँग नहीं मनवा पाता। क्योंकि हमारी ताकत छोटी होती है उसमें भी एक-दो मज़दूर, फ़ोरमैन मालिक का चमचा होता ही है। किसी चीज का विरोध करने पर मालिक तुरन्त उन मज़दूरों को निकाल कर नयी भर्ती ले लेता है। मज़दूर तुरन्त मिल भी जाता है। विरोध करने वाले मज़दूरों का पैसा भी मारा जाता है। मज़दूरों के पास इतना समय भी नहीं होता कि वह यहाँ-वहाँ भागदौड़ करे क्योंकि काम छूटने के बाद नया काम भी ढूँढ़ना पड़ता है क्योंकि इतनी कम तनख्वाह (2,000 रुपये) में मज़दूर के पास कुछ बचता ही नहीं है कि वह एक दिन भी बैठ कर बिताये। और ऐसे भी मज़दूरों को पता है कि भाग-दौड़ करने से कोई फ़ायदा नहीं होगा। क्योंकि सरकार, पुलिस सब मालिकों के साथ ही होती है।

दोस्तो, ऐसे समय में मैं कहना चाहूँगा कि हमारे पास सिर्फ़ एक ही रास्ता है कि खुद को संगठित करना पड़ेगा, सिर्फ़ एक फ़ैक्ट्री के मज़दूरों को ही नहीं बल्कि उस पूरे फ़ैक्ट्री इलाके के मज़दूरों को। हम जिस ब्लॉक में काम करते हैं या जिस इलाके में काम करते हैं उस पूरे इलाके की यूनियनें और जहाँ रहते हैं उस इलाके के संगठन बनाने होंगे। जैसे ब्लॉक की यूनियन या भोरगढ़ के मज़दूरों की यूनियन या शाहपुर के मेहनतकशों का संगठन। क्योंकि जब तक हम बड़ी ताकत नहीं बनेगें तब तक मालिक हम लोगों की जिंदगियों से खेलता रहेगा। अभी कम मज़दूरों का विरोध होने से मालिक आसानी से उसको दबा देता है, लेकिन जब हमारी बड़ी ताकत होगी तो किसी भी एक कम्पनी से किसी मज़दूर को निकालने पर उस पूरे इलाके की फ़ैक्ट्रियों के मज़दूरों हड़ताल, विरोध प्रदर्शन करेंगे या जिस इलाके में रहते हैं वहाँ के संगठन उस फ़ैक्ट्री के विरुद्ध धरना-प्रदर्शन देंगे। तब मालिक को झुकाना आसान होगा क्योंकि जब सभी फ़ैक्ट्रियों में हड़ताल होगी तो इतने मज़दूरों को मालिक नहीं निकाल सकता क्योंकि इतने मज़दूर उसको तुरन्त कहाँ मिलेंगे।

हमारे पास यही एक रास्ता है दोस्तो, हम कब तक यूँ ही घुट-घुटकर जीते रहेंगे, आज नहीं तो कल हमें लड़ना ही होगा तो क्यों न आज से ही शुरुआत की जाए ताकि हमारा कल और आने वाली पीढ़ी का आज खुशहाल हो सके। दोस्तो जानवरों की तरह हजार दिन जीने से अच्छा है कि इन्सानों की तरह अपने पूरे स्वाभिमान के साथ एक दिन जिया जाये।

– मुकेश
भोरगढ़, नरेला, दिल्ली

नरेगा : सरकारी दावों की ज़मीनी हकीकत – एक रिपोर्ट

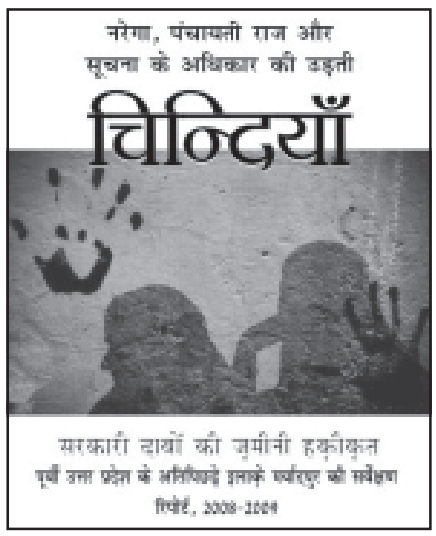

देहाती मज़दूर यूनियन और नौजवान भारत सभा द्वारा मर्यादपुर इलाके में नरेगा के तहत जारी भ्रष्टाचार और घोटाले का भण्डाफोड़ करती रिपोर्ट का आवरण पृष्ठ

राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार गारण्टी योजना (नरेगा) को सत्तारूढ़ यूपीए गठबन्धन की सबसे बड़ी उपलब्धि बताया जा रहा है। इसे इस रूप में पेश किया जा रहा है जैसे कुछ भ्रष्टाचार और धाँधलियों के बावजूद यह एक क्रान्तिकारी परिवर्तन लाने वाली योजना है। लेकिन ज़मीनी हक़ीक़त इसके एकदम उलट है। पूर्वी उत्तर प्रदेश के एक अतिपिछड़े इलाक़े मर्यादपुर में किये गये देहाती मज़दूर यूनियन और नौजवान भारत सभा द्वारा हाल ही में किये गये एक सर्वेक्षण से यह बात साबित होती है कि नरेगा के तहत कराये गये और दिखाये गये कामों में भ्रष्टाचार इतने नंगे तरीक़े से और इतने बड़े पैमाने पर किया जा रहा है कि यह पूरी योजना गाँव के सम्पन्न और प्रभुत्वशाली तबक़ों की जेब गर्म करने का एक और ज़रियाभर बनकर रह गयी है। साथ ही यह बात भी ज्यादा साफ हो जाती है कि पूँजीवाद अपनी मजबूरियों से गाँव के गरीबों को भरमाने के लिए थोड़ी राहत देकर उनके गुस्से पर पानी के छींटे मारने की कोशिश जरूर करता है लेकिन आखिरकार उसकी इच्छा से परे यह कोशिश भी गरीबों को गोलबंद होने से रोक नहीं पाती है। बल्कि इस क्रम में आम लोग व्यवस्था के गरीब-विरोधी और अन्यायपूर्ण चेहरे को ज्यादा नजदीक से समझने लगते हैं और इन कल्याणकारी योजनाओं के अधिकारों को पाने की लड़ाई उनकी वर्गचेतना की पहली मंजिल बन जाती है।

:::::::

प्रस्तुत रिपोर्ट पूर्वी उत्तर प्रदेश के मऊ ज़िला के अन्तर्गत मर्यादपुर ग्राम सभा के ग़रीबों, मज़दूरों तथा वंचितों की जीवन स्थितियों का तथ्यपरक ब्योरा है। पंचायती राज और अब नरेगा ने उनके जीवन को कितना और कैसे प्रभावित किया, यह इस रिपोर्ट से आसानी से समझा जा सकता है।

देहाती मज़दूर यूनियन और नौजवान भारत सभा एक लम्बे अरसे से मर्यादपुर क्षेत्र में गाँव के ग़रीबों और मज़दूरों के बीच संगठन एवं प्रचार कार्य करती रही है। 198 हेक्टेयर क्षेत्रफल में फैली ग्राम सभा में 60 प्रतिशत लोग भूमिहीन हैं। 25 प्रतिशत के पास एक से दो बीघा ही ज़मीन है। इस ग्राम सभा के आठ टोले – अंजोरपुर, मर्यादपुर मुख्य, छोटा पुरवा, बड़ा पुरवा, उतराई, करबला, पूर्वी हरिजन टोला और लाहोजरा हैं। क़रीब 10,000 आबादी वाले इस गाँव में कुल 1,250 परिवार रहते हैं। इस ग्राम सभा में 400 परिवार मछुआरों के हैं, जो परम्परागत रूप से ताल रतोय पर अपनी आजीविका के लिए निर्भर हैं। लेकिन सरकार की निजीकरण-उदारीकरण की नीतियों और एन.जी.ओ. के भितरघात ने आज इन मछेरों के सामने आजीविका का प्रश्न पैदा कर दिया है। 21 जनवरी 2009 से 6 फ़रवरी 2009 तक देहाती मज़दूर यूनियन और नौजवान भारत सभा के कार्यकर्ताओं ने ग्राम सभा के सभी आठ टोलों में कैम्प आयोजित किये। इन कैम्पों में 410 परिवारों ने अपनी समस्याओं को ब्योरेवार दर्ज करवाया।

कैम्प के दौरान हमारे सामने कई चौंकाने वाले तथ्य आये। पूर्वी उत्तर प्रदेश के एक अतिपिछड़े इलाक़े मर्यादपुर में किये गये देहाती मज़दूर यूनियन और नौजवान भारत सभा के सर्वेक्षण से पता चलता है कि वर्ष 2008-'09 के दौरान नरेगा के तहत सिर्फ़ 11.4 प्रतिशत मज़दूरों को काम मिला। इन्हें भी सालभर में औसतन मात्र 26 दिन ही रोज़गार मिला। 20% परिवार ऐसे मिले जिनके सदस्य नरेगा के तहत काम करने के इच्छुक थे लेकिन उनका परिवार पंजीकरण कार्ड किसी न किसी बहाने से बनाया ही नहीं गया। गाँव के 63.17 प्रतिशत परिवारों के पास पक्के आवास नहीं हैं। वे या तो छान-छप्पर में रहते हैं, या फिर प्लास्टिक की शीट डालकर या टूटी-फूटी मड़ई में किसी तरह जीवन बसर कर रहे हैं। गाँव के 91.21 प्रतिशत घरों में शौचालय नहीं हैं। 85.85 प्रतिशत बेहद ग़रीब परिवार बी.पी.एल./अन्त्योदय राशन कार्ड से वंचित हैं या उन्हें ग़रीबी रेखा से ऊपर का कार्ड जारी कर दिया गया है। आलम यह है कि शासनादेश को ताक पर रखते हुए मज़दूरी का भुगतान बैंक खातों के बजाय नक़द किया जा रहा है।

क्या कहते हैं नरेगा मज़दूर

सर्वे के दौरान 146 नरेगा मज़दूरों से जाँच टोली ने बातचीत की। हमें एक भी ऐसा मज़दूर नहीं मिला जिसे पता हो कि जॉब कार्ड कैसे बनता है, काम के लिए आवेदन कब और कैसे करना होता है। उन्हें मस्टररोल के बारे में भी कोई जानकारी नहीं थी। रामप्रसाद ने बताया कि जॉब कार्ड बनवाने के लिए उनसे 200 रुपये माँगे गये। पूछने पर पता चला कि पंचायत ने कभी कोई नरेगा जागरूकता अभियान चलाया ही नहीं। 30.82 प्रतिशत ऐसे मज़दूर थे जिनका जॉब कार्ड तो बना लेकिन प्रधान से कई बार कहने के बावजूद उन्हें काम नहीं मिला। 33.66 प्रतिशत मज़दूरों को कई महीने बीत जाने के बावजूद मज़दूरी का भुगतान ही नहीं किया गया है। एक भी ऐसा मज़दूर नहीं मिला जिनका जॉब कार्ड अपडेट हो। कई लोग तो ऐसे थे जिन्होंने बारह से पन्द्रह दिन तक काम भी किया लेकिन उनका हाजिरी कार्ड एकदम ख़ाली था। एक आरटीआई से पता चला कि नरेगा के तहत वर्ष 2008-2009 में मात्र 51 मज़दूरों को ही काम दिया गया। इन्हें भी औसतन मात्र 26 दिन का ही रोज़गार मिला । मज़दूरों ने बताया कि मौक़ा-मुआयना करने वाले इंजीनियर ज़्यादा से ज़्यादा काम करने का दबाव बनाते हैं। इस सम्भावना से इंकार नहीं किया जा सकता कि मज़दूरों से तय मानदण्डों से अधिक काम करवाया जाता हो और अतिरिक्त श्रम की मज़दूरी को फर्जी जॉब कार्ड के जरिये निकाल लिया जाता हो।

नरेगा के योजनाकारों ने योजना निर्माण एवं क्रियान्वयन के लिए पंचायतों को सबसे महत्वपूर्ण संस्थान करार दिया है। सच्चाई यह है कि सर्वे के दौरान पूरे गाँव में एक भी व्यक्ति ऐसा नहीं मिला जिसने कभी भी ग्राम सभा की खुली बैठकों में हिस्सेदारी की हो। वस्तुत: उन्हें ऐसी सभाओं के बारे में कभी भी बताया ही नहीं गया है। और तो और 18.04% परिवारों में ऐसे कई सदस्य थे जिनके वोटर कार्ड तक नहीं बनाये गये। ऐसे में पाठक स्वयं ही ग्राम स्वराज्य की वास्तविकता का अनुमान लगा सकते हैं।

नरेगा के तहत भ्रष्टाचार पर अंकुश लगाने के बाबत सरकार ने बैंक खातों से भुगतान का नियम बनाया है। यदि नरेगा मज़दूरों की बातों पर यक़ीन करें तो बकौल कैलाश "अभी भी क़रीब 200 मज़दूर ऐसे हैं जिनका बैंक खाता नहीं खुला है।" कुछ जगह मज़दूरी का भुगतान बैंक खातों के बजाय नक़द किये जाने की भी सूचना मिली। गाँव वालों ने बताया कि बैंकों में दलालों का बोलबाला है। खाता खुलवाने के लिए मनचाहे पैसे वसूले जाते हैं। बैंक के फार्म तक बेचे जा रहे हैं। जाँच टीम को बारह ऐसे लोग मिले जिन्होंने एक अरसे से खाता खोलने की अर्जी दे रखी है लेकिन बैंक का मैनेजर उन्हें खाता नम्बर नहीं दे रहा है।

सूचना अधिकार?! पारदर्शिता?! जनतन्त्र?!

उत्तर प्रदेश पंचायती राज निदेशालय नागरिक चार्टर में घोषणा करता है कि – "ग्राम पंचायत को प्राप्त धनराशि से कराये गये कार्यों का विवरण सार्वजनिक भवन पर वाल पेण्टिंग के माध्यम से दर्शाया जाये। मस्टर रोल एवं लाभार्थी सूची आदि का प्रकाशन कार्यालय के सूचना पट्ट पर किया जाये।" अन्यत्र लिखा गया है कि – "पंचायतें पूर्ण जनसहभागिता तथा पारदर्शिता के साथ ग्रामीण प्रशासन एवं ग्रामीण विकास की परिकल्पना को साकार करेंगी।" लेकिन वास्तविकता यह है कि मर्यादपुर पंचायत भवन शायद ही कभी खुलता हो। नौकरशाही और नेताशाही मस्टर रोल तथा योजनाओं के वित्तिय ब्योरों को अति गोपनीय दस्तावेज़ों की तरह बरतती है, मानो सार्वजनिक हो जाने पर राष्ट्र की सुरक्षा ख़तरे में पड़ जायेगी। देहाती मज़दूर यूनियन और नौजवान भारत सभा के कार्यकर्ताओं ने आर.टी.आई. के जरिए दिनांक 06.12.2008 को सूचना अधिकारी/कार्यक्रम अधिकारी, फतहपुर मण्डाव को सम्बोधित एक पत्र में मर्यादपुर व ब्लॉक स्तर की विकास योजनाओं का ब्यौरा माँगा था। चालीस दिन बीत जाने के बाद भी जब सूचना नहीं मिली तो बी.डी.ओ. और सेक्रेटरी से कई मौखिक अनुरोध किये गये। एक दिन हमारा तकादा करना उन्हें इतना नागवार गुजरा कि बी.डी.ओ. साहब ने पुलिस में शिकायत करने और जेल भिजवाने की धमकी तक दे डाली। जवाब में जब हमने अपील अधिकारी से शिकायत करने की बात कही तब कहीं जाकर 75 दिन पश्चात दिनांक 20.02.2009 को हमें ग्राम सेक्रेटरी द्वारा रजिस्टर्ड डाक से भेजे गये पत्र द्वारा सूचित किया गया कि हम समस्त सूचनाएँ ज़िला पंचायत से जाकर माँग लें। एक अन्य आरटीआई आवेदन के जवाब में, जो एक बी.पी.एल. कार्डधारक द्वारा

(पेज 5 पर जारी)

नरेगा की अनियमितताओं के खिलाफ लड़ाई फैलती जा रही है

मर्यादपुर। देहाती मजदूर यूनियन और नौजवान भारत सभा के नेतृत्व में मर्यादपुर के नरेगा मजदूर और गरीबों द्वारा शुरु किया गया संघर्ष धीरे-धीरे क्षेत्र के दूसरे गाँव में फैलता जा रहा है। दरअसल दोनों संगठनों के कार्यकर्ताओं ने इस मुद्दे को व्यापक बनाने के लिए जगह-जगह नुक्कड़ सभाएं करनी शुरू कर दी है। इन सभाओं में आम मजदूरों की काफी भागीदारी दिखायी दे रही है। शेखपुर (अलीपुर), लखनौर, ताजपुर, जवाहरपुर गोठाबाड़ी, रामपुर, नेमडाड, कटघरा, लऊआ सात और अनेक दूसरे गाँवों में भी सभाओं में मजदूर भारी संख्या में पहुँचे। उन्होंने खुल कर अपनी समस्याएँ सामने रखी। शेखपुर के मजदूरों ने बताया कि अव्वल तो जरूरतमंदों के कार्ड बने ही नहीं है और जिनके बने भी हैं, उनके जॉब कार्ड प्रधान ने अपने पास रखे हैं। इस गाँव में मजदूरों को साल भर में बमुश्किल 5-6 दिन ही रोजगार मिला। लखनौर ग्राम सभा में भी ऐसा ही हाल मिला। वहाँ के एक नरेगा मजदूर जगरनाथ ने बताया कि काम के दौरान उनके पाँव में गम्भीर चोट लगी थी, लेकिन उन्हें बिना किसी दवा इलाज के यूँ ही छोड़ दिया गया। बाद में घाव पक गया और वे साल भर तक उसका इलाज का खर्च उठाते रहे। महिलायें आमतौर पर यह शिकायत कर रही थीं कि उनके रोजगार कार्ड बनाये ही नहीं जा रहे हैं। उन्हें बताया जाता है कि घर की औरतें बाहर का काम कैसे करेंगी। रामपुर के मजदूरों को तो साल भर पहले किये गये काम का मेहनताना तक नहीं दिया गया है। कमोबेश हर गाँव के मजदूरों की यह शिकायत थी कि नरेगा में रोजगार न के बराबर है और बेरोजगारी भत्ता दिया ही नहीं जाता है।

25 फरवरी 2006 को मर्यादपुर के 30 मजदूरों ने काम के लिये आवेदन किया था। 22 दिन बीत जाने के बाद जब काम नहीं मिला तो बी.डी.ओ. से बेरोजगारी भत्ते की मांग की गयी। इसपर ''बी.डी.ओ. साहब'' का कहना था कि चूँकि रोजगार के लिए आवेदन हमारे कार्यकाल में नहीं किया गया है इसलिए बेरोजगारी भत्ता नहीं मिलेगा। प्रशासन के रवैये से खिन्न 19 मजदूरों ने 22 मार्च को पुन: रोजगार के लिए आवेदन किया। कार्यलय के कर्मचारी व अधिकारी आवेदन के प्राप्ति रसीद देने में आनाकानी करने लगे। अन्त में बड़े बाबू ने मजबूर होकर बी.डी.ओ. से रोजगार आवेदन पत्र पर दस्तखत करने को कहा तो ''बी.डी.ओ. साहब'' कह उठे - अरे, अगर हम रोजगार नहीं दे पाये तो ये लोग फिर से बेरोजगारी भत्ता मांगने आ जायेंगे। अपने आपको चारों ओर से घिरा हुआ पाकर ब्लॉक प्रशासन ने मजबूरन मर्यादपुर में एक खड़ंजा निर्माण कार्य नरेगा के तहत शुरु करवा दिया। इसमें 16 मजदूरों को रोजगार मिला है। साइट पर देहाती मजदूर यूनियन के कार्यकर्ताओं को भी बुलवाया गया। यहाँ पर भी ''बी.डी.ओ. साहब'' मोल-तोल करने से बाज नहीं आये। उन्होंने देहाती मजदूर यूनियन के डा0 दूधनाथ से प्रस्ताव किया कि ''हमने आपकी एक बात मान ली है, रोजगार दिलवा दिया है, अब आपलोग भी हमारी एक बात मान लें। आप मजदूरों से कहें कि वे बेरोजगारी भत्ते की मांग वापिस ले लें।''

स्पष्ट है कि खाते-पीते धनिक तबकों से आने वाले अफसर और कर्मचारी इस पूंजीवादी व्यवस्था के पहरेदार हैं। यहीं लोग आज भारत में शासन व्यवस्था की बागडोर सम्भाले हुये हैं और इन्हीं लोगों पर जिम्मेदारी डाली गयी है कि वे जनकल्याणकारी योजनाओं से लेकर देश में हर स्तर पर गरीबों को न्याय दिलवायेंगे। इससे भी महत्वपूर्ण समझने वाली बात यह है कि वास्तव में गरीबों द्वारा नियंत्रित शासन व्यवस्था ही जनकल्याणकारी योजनाओं को पूरी दृढ़ता के साथ लागू कर सकती है और इसके लिए स्वयं मजदूरों का राजकाल स्थापित करना होगा। फिलहाल जहां तक वर्तमान संघर्ष की बात है तो गांव के मजदूर और गरीब धीरे-धीरे समझने लगे हैं कि उनके सामने अपने अधिकारों को पाने के लिए संगठित संघर्ष के अलावा अन्य कोई रास्ता ही नहीं है। 20 अप्रैल से क्षेत्र के मजदूरों ने देहाती मजदूर यूनियन और नौजवान भारत सभा के नेतृत्व में अनशन की घोषणा की है और मांग न माने जाने पर अनिश्चितकालीन भूख हड़ताल की तैयारियाँ की जा रही हैं।

– बिगुल संवाददाता

नरेगा : सरकारी दावों की ज़मीनी हकीकत

तालिका

ग्राम सभा मर्यादपुर में जाँच टोली द्वारा कुल 146 नरेगा मज़दूरों से पूछे गये सवाल और उनके जवाब

क्रम	विवरण	संख्या
1.	बिल्कुल काम नहीं मिला	30.82%
2.	औसतन 15 से 20 दिन का रोज़गार मिला	69.17%
3.	काम मिला लेकिन दो महीने बाद भी मज़दूरी नहीं मिली	33.66%
4.	बैक खाता नहीं खुला	22.00%
5.	बैंक खाता का फार्म भरा लेकिन बैंक मैनेजर खाता नम्बर नहीं दे रहा है	08.21%
6.	बेरोज़गारी भत्ता नहीं मिला	100%
7.	पंचायत की ओर से नरेगा जागरूकता के लिए कभी कुछ नहीं किया गया	100%

माँगा गया था, मस्टररोल की फ़ोटोप्रति देने के लिए 3,000 रुपये भुगतान की माँग की गयी।

कहाँ गये विकास निधि के 10,33,729 रुपये ?

वित्त वर्ष 2007-08 की ग्राम सभा मर्यादपुर की विकास रिपोर्ट के पृष्ठ 34 पर दर्शाया गया है कि नरेगा के तहत ग्राम पंचायत ने कुल 6 निर्माण कार्य करवाये, जिसमें 5 कार्य नालों की खुदाई व सफाई के थे तथा एक नाली निर्माण का था। यही नाली निर्माण पृष्ठ संख्या 4 पर एक अन्य कार्ययोजना के अन्तर्गत भी दर्शाया गया है। रिपोर्ट के पृष्ठ 34 पर नरेगा के तहत कुल 7912 मानव श्रम दिवस सृजित दिखाये गये हैं। इस तरह कुल 3081 (7912-4831=3081) मानव श्रम दिवस का कोई हिसाब नहीं मिलता। यदि इसे मज़दूरी में तब्दील किया जाये तो यह 3,08,100 रुपये के बराबर बैठती है। यदि हम इस राशि में अन्य निर्माण योजनाओं में हुए सरकारी धन के दुरुपयोग को जोड़ दें तो यह वर्ष 2007-08 के लिए 10,33,729 रुपये होता है।

सरकारी जाँच!

सरकारी अधिकारियों और पंचायती राज के राजाओं की आपसी बन्दरबाँट ने ग्राम सभा मर्यादपुर के ग्रामीणों के जीवन में कोढ़ में खाज का काम किया है। 23 फ़रवरी 2007 को ज़िला मुख्यालय मऊ पर गाँव के 600 से अधिक लोगों ने प्रदर्शन किया व धरना दिया। जनता के दबाव में शासन ने तुरन्त एक जाँच दल गाँव में भेज दिया। जाँच दल में तत्कालीन ए.डी.ओ. व ग्राम सेक्रेटरी थे। शायद इसी को बिल्ली से दूध की रखवाली करना कहा जाता होगा। इन दोनों साहबों ने शिवमन्दिर पोखरे के पास ग्रामवासियों को इकट्ठा करवाया और फिर जाँच शुरू की। ए.डी.ओ. के पास कुछ लाल-सफ़ेद राशन कार्ड थे। वो कार्ड हवा में दिखाता, परिवार के मुखिया का नाम पुकारता और फिर भीड़ से सवाल पूछता – "बताओ यह व्यक्ति पात्र है या अपात्र?" भीड़ में मौजूद कुछ लोग उसे पात्र बताते तो कुछ लोग अपात्र कहते। धीरे-धीरे ऐसी स्थिति पैदा हो गयी कि भीड़ दो खेमों में बँट गयी और उनमें आपस में मारपीट की स्थिति पैदा हो गयी, या कहा जाये कि पैदा कर दी गयी। इस दौरान देहाती मज़दूर यूनियन और नौजवान भारत सभा के कार्यकर्ता मौजूद थे। उन्होंने स्थिति को सँभाला और जाँच अधिकारियों द्वारा तोड़फोड़ की साजिश को बेनक़ाब किया।

सरकार पर टूटता भरोसा, मजबूत होती आपसी एकजुटता

ग्राम सभा की क़रीब-क़रीब शत-प्रतिशत आम आबादी नौकरशाहों और नेताओं में अपना भरोसा खोती जा रही है। उन्हें लगता है कि सरकारी अधिकारी केवल पैसे वालों की ही सुनते हैं। वैसे भी इस रिपोर्ट के आँकड़े यही बताते हैं कि मर्यादपुर के ये ग़रीब-मेहनतकश 20 रुपये रोज़ पर ज़िन्दा रहने वाले देश के उन 84 करोड़ हिन्दुस्तानियों का हिस्सा हैं जिन्हें शाइनिंग इण्डिया और डबल डिजिट ग्रोथ रेट के रुपहले पर्दे के पीछे के सीलन भरे अँधेरे में धकेल दिया गया है। इसमें ज़रा भी अचरज की बात नहीं है कि चाहे पंचायती राज जैसी संस्था हो या फिर नरेगा जैसी कल्याणकारी योजना, उसका अमली रूप पूँजी के गर्भ से पैदा होने वाले वर्गीय पूर्वाग्रहों, शोषण और भ्रष्टाचार से मुक्त हो ही नहीं सकता है। गाँव के ग़रीब तक यह समझने लगे हैं कि सरकार उसके नौकरशाह और नेता सभी धन और धनिकों की चाकरी करते हैं, कि उन्हें आम जन की दु:ख-तकलीफ़ों से कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता। लेकिन साथ ही वे यह बात भी समझने लगे हैं कि एकजुट हो कर संघर्ष करने के अलावा उनके सामने कोई और रास्ता नहीं है। स्पष्ट ही इन समस्याओं की प्रकृति सामाजिक-आर्थिक ढाँचे से जुड़ी हुई है। इस ढाँचे को बदले बिना समस्याओं के रूप को तो बदला जा सकता है लेकिन समस्याओं का अन्त अकल्पनीय है। वास्तविक बदलाव की लड़ाई सापेक्षत: एक लम्बी प्रक्रिया है। अत: **देहाती मज़दूर यूनियन** और **नौजवान भारत सभा** ने निम्नलिखित फ़ौरी राहतों की माँग की है –

1. नरेगा के क्रियान्वयन के लिए पृथक सरकारी तन्त्र सुनिश्चिन किया जाये।

2. ग्राम स्तर पर नरेगा मज़दूरों की समस्याओं के त्वरित निवारण हेतु साप्ताहिक कैम्प लगाये जायें।

3. ग्राम सभा की खुली बैठकों का आयोजन अमली रूप में सुनिश्चित करवाया जाये।

4. ग्राम पंचायत के धन से करवाये गये निर्माण कार्यों का विवरण सार्वजनिक करवाना सुनिश्चित करवाया जाये। मस्टर रोल एवं लाभार्थी सूची का प्रकाशन आम जन के लिए हो।

5. बी.पी.एल. व अन्त्योदय राशन कार्ड, आवास, पेंशन आदि के वितरण तथा नरेगा मज़दूरों की सभी समस्याओं का कैम्प लगाकर तुरन्त प्रभाव से निस्तारण किया जाये।

6. ग्राम सभा मर्यादपुर के पिछले पाँच वित्त वर्षों के दौरान हुई धाँधली और सरकारी धन के दुरुपयोग की उच्चस्तरीय जाँच हो। दोषी अधिकारियों को तुरन्त प्रभाव से सेवामुक्त किया जाये।

देश भर में हो रही है मज़दूरों की छँटनी

(पेज 1 से आगे)

जनवरी 2009 के आखिरी सप्ताह दिये गये एक बयान में उन्होंने बताया कि भारतीय निर्यातक कंपनियों ने 10 लाख से भी अधिक मज़दूरों की छँटनी की है। कपड़ा और कपड़े के उत्पाद निर्यात करने वाले उद्योगों के मालिकों के एक संगठन-अपैरल एक्सपोर्ट प्रमोशन काउंसल के चेयरमैन राकेश वैद के फरवरी में दिये बयान से ही बड़े स्तर पर छँटनी करने के पूँजीपतियों के मंसूबों का पता चल जाता है। बयान था कि अप्रैल तक कपड़ा उद्योग से 15 लाख मज़दूरों की छँटनी हो सकती है। संकट के चलते सूरत (गुजरात) में हीरे के लगभग 3000 कारखानों में से लगभग 2000 कारखाने बंद हो चुके हैं। इन कारखानों में काम करने वाले 5 लाख मज़दूरों में से 2 लाख की छँटनी हो चुकी है। इन कारखानों में पीस रेट घटा दिया गया है, जिसका अर्थ है कि जिनकी नौकरी अभी नहीं गयी है उन्हें भी अब पहले से कम पैसे पर गुजारा करना पड़ रहा है। संकट से पहले दूसरे प्रकार के उद्योगों में काम करने वाले मज़दूरों के मुकाबले कुछ बेहतर कमाई कर लेने वाले हीरे के कारखानों के मज़दूरों की हालत अब इतनी असहनीय है कि छँटनी के बाद 35 से भी अधिक आत्महत्याएँ हो चुकी हैं।

ऑटोमोबाइल उद्योग भी अब पिछले गियर में चल रहा है। जनवरी 2007 में केन्द्र सरकार ने विश्व की सबसे बड़ी ऑटोमोबाइल कम्पनियों में से सात सबसे बड़ी कम्पनियों हुण्डई, फोर्ड, टोयटा आदि से एक समझौता किया। इस समझौते में अनुसार उत्तार में राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र, पश्चिम में महाराष्ट्र और दक्षिण में कर्नाटक और तमिलनाडु में ऑटोमोबाइल उद्योग का विस्तार किए जाने का निर्णय किया गया। 2016 तक इस उद्योग के जरिये 25 लाख लोगों के लिये रोज़गार पैदा करने का ऐलान किया गया था लेकिन समझौते को एक वर्ष भी नहीं गुजरा कि ऑटोमोबाइल उद्योग को ही ब्रेक लग गये। वाहनों और पुर्जों की बिक्री में बड़ी गिरावट के कारण इस उद्योग में जहाँ नये प्रोजेक्ट तो लगाये ही नहीं जा रहे वहाँ पहले से हो रहे उत्पादन की मात्रा घटा दी गई है। मज़दूरों को बड़ी संख्या में नौकरियों से हाथ धोना पड़ा है। टीवीएस मोटर्स, चेन्नई के चेयरमैन वेणु श्रीनिवासन ने माना कि कम से कम सितम्बर 2010 तक ऑटोमोबाइल उद्योग के सँभलने की कोई उम्मीद नहीं है।

एक अंग्रेजी पत्रिका के मुताबिक रियल एसटेट के मंदी की चपेट में आने के कारण कम से कम 10 लाख निर्माण मज़दूरों को बेरोज़गारी का सामना करना पड़ रहा है। उन्हें सप्ताह में तीन दिन से अधिक काम नहीं मिल पा रहा है।

अन्य बहुत से हथकंडों के जरिये भी मंदी का सारा बोझ मज़दूरों पर ही डाला जा रहा है। वेतन-दिहाड़ी-पीस रेट में कटौती, पहले जितने वेतन में ही काम के घण्टे बढ़ाना, सप्ताह के कुछ ही दिन काम चलाया जाना आदि से मज़दूरों की बेहिसाब आबादी संकट का शिकार बनाई जा रही है।

यही नहीं, जो मध्यवर्ग पूँजीवादी व्यवस्था की जय-जयकार करता नहीं थकता था और पिछले समय में हुए पूँजीवादी विकास ने मध्यवर्ग के जिस एक हिस्से को आसमान की बहुत सैर कराई है उसे भी इस संकट ने धरती पर उतर आने के लिए मजबूर कर दिया है। पिछले कई वर्षो से फुलाया जा रहा सूचना तकनीक उद्योग का गुब्बारा अब फूट चुका है। उँचे वेतन दे सकने वाला यह उद्योग जो मध्यवर्गीय नौजवानों को रोजगार पाने का एक सुनहरा स्रोत नज़र आता था वही अब छँटनियाँ कर रहा है। आई.आई.टी. और आई.आई.एम. जैसे संस्थानों में जहाँ पढ़ाई खत्म होने से पहले ही सबकी नौकरी लग जाती थी वहाँ भी हालत अब बदल चुकी है। जिन्हें बेरोजगारी की समस्या की चर्चा करने वाले व्यक्ति किसी दूसरे ग्रह से आये लगते थे वो अब खुद धरती पर लौटने लगे हैं।

छँटनी से सम्बन्धित आँकड़ों की चारों तरफ भरमार है। लेकिन यह आँकड़े आये दिन बदल रहे हैं। हर दिन मज़दूरों को काम से निकाला जा रहा है। बेरोज़गारों की कतारें दिन-ब-दिन लम्बी होती जा रही हैं। बेरोजगारी के अचानक आये तूफान से मज़दूरों और उनके परिवारों की समस्याओं के लिये 'गम्भीर', 'भयंकर' आदि शब्द बहुत छोटे पड़ेंगे। मज़दूरों के लिये बेरोजगारी का अर्थ होता है–दो वक्त की मिल रही रोटी भी छिनना। लेकिन क्या करोड़ों-करोड़ मज़दूर भुखमरी का शिकार होकर बिना कुछ बोले मौत कबूल कर लेंगे? ऐसा तो सोचा भी नहीं जा सकता। मज़दूर वर्ग भूख से नहीं मरेगा। निस्सन्देह, भविष्य अपने भीतर महान जनसंघर्षों को छुपाये हुए है। बस देखना यह है कि कब और कहाँ से शुरुआत होती है!

–लखविन्दर

भगतसिंह के शहादत दिवस पर पोस्टर प्रदर्शनी

लखनऊ, 23 मार्च। 'हवा में रहेगी मेरे ख्याल की बिजली, ये मुश्ते ख़ाक़ है फ़ानी, रहे रहे न रहे।' ये पक्तियाँ शहीदेआज़म भगतसिंह ने फाँसी के फन्दे को चूमने से पहले अपने भाई कुलतार सिंह के नाम लिखे अन्तिम पत्र में लिखी थीं।

भगतसिंह, सुखदेव और राजगुरु के शहादत दिवस (23 मार्च) के अवसर पर राहुल फाउण्डेशन ने लखनऊ के हज़रतगंज में एक पोस्टर प्रदर्शनी आयोजित की। पोस्टर में भगतसिंह के उद्धरण **"अगर कोई सरकार जनता को उसके बुनियादी हक़ों से वंचित रखती है तो उस देश के नौजवानों का हक़ ही नहीं, आवश्यक कर्त्तव्य बन जाता है कि वह ऐसी सरकार को उखाड़ फेंके या तबाह कर दें।"** को लेकर प्रदर्शनी स्थल पर नागरिकों व नौजवानों के बीच काफी बहस-मुबाहिसे का माहौल उपस्थित था। प्रदर्शनी आयोजक सदस्य लालचंद का कहना था कि इस जगह प्रदर्शनी लगाने का उद्देश्य भगतसिंह के विचारों को आम लोगों के बीच ले जाना है, उन्हें इन विचारों से परिचित करना और भगतसिंह के अधूरे सपनों को पूरा करने के लिए उनका आह्वान करना है। शालिनी का कहना था कि आज देश के वर्तमान हालत को बदलने के लिए भगतसिंह के विचारों के आधाार पर एक क्रान्तिकारी संगठन बनाने के काम में हम लोग लगे हुए हैं और यह बताना चाहते हैं कि भगतसिंह के विचार जीवित हैं और उनके सपनों के हिन्दुस्तान को बनाने के लिए आज के युवा आगे आयेंगे।

इस अवसर पर **'जनस्वर'** नाम से एक बड़े पोस्टर पर लोगों की प्रतिक्रियाएँ भी ली जा रही थीं। साथ ही भगतसिंह की स्मृति में लोगों के बीच एक संकल्प पर्चा भी वितरित किया जा रहा था। प्रदर्शनी के पोस्टर पर लिखा भगतसिंह का यह सन्देश मानो आज के नौजवानों के नाम उनके पैग़ाम को ज़ाहिर कर रहा था – **"नौजवानों को क्रान्ति का यह सन्देश देश के कोने-कोने में पहुँचाना है, कारखानों के क्षेत्रों में, गन्दी बस्तियों और गाँवों की जर्जर झोंपड़ियों में रहने वाले करोड़ों लोगों में इस क्रान्ति की अलख जगानी है जिससे आज़ादी आयेगी और तब एक मनुष्य द्वारा दूसरे मनुष्य का शोषण असम्भव हो जायेगा।"**

क्रान्तिकारियों के अधूरे सपनों को पूरा करने का संकल्प

शहीद भगतसिंह, राजगुरू और सुखदेव के 78वें शहादत दिवस के मौके पर नौजवान भारत सभा, स्त्री मुक्ति लीग और बादाम मज़दूर यूनियन ने दो दिवसीय कार्यक्रम आयोजित किया। इसकी पूर्व संध्या पर दिलशाद गार्डन में शहीदों के जीवन को दर्शाती पोस्टर प्रदर्शनी व सांस्कृतिक कार्यक्रम किया गया और करावल नगर में 23 मार्च को प्रभात फेरी व शाम को मशाल जुलूस निकाला गया। दिलशाद गार्डन स्थित जी.टी.बी. अस्पताल के आवासीय परिसर में कार्यक्रम का प्रारम्भ शहीदों की स्मृति में नौभास की गायन टोली ने क्रांतिकारी गीतों से किया।

'भगत सिंह तुम जिन्दा हो, हम सबके संकल्पों में ', भगत सिंह की बात करेंगे, जुल्म नहीं बर्दाशत करेंगे, आदि नारे लगाते हुए, हाथों में मशाल थामे क्रांतिकारी नौजवानों की टोली ने करावल नगर के मुकुन्द विहार, अंकुर एन्कलेव, प्रकाश विहार, न्यू सभापुर गुजरान व शहीद भगतसिंह कॉलोनी की गलियों में गुजरते हुए क्रांतिकारी अलख जगाने का प्रयास किया। इस मशाल जुलूस के तहत जगह-जगह नुक्कड़ सभाएँ करते हुए बताया गया कि भगतसिंह व साथियों ने जिस आजाद भारत का सपना देखा था वह पूरा नहीं हुआ। भगतसिंह के अधूरे सपनों को पूरा करने के लिए लोगों को आगे आना होगा। मशाल जुलूस का समापन एक संकल्प सभा के साथ किया गया। सभा में नौ.भा.स. के संयोजक आशीष ने कहा कि आज चारों ओर पस्त हिम्मती का आलम छाया हुआ है ऐसे में बहादुर क्रांतिकारियों को याद करना जरूरी है। इन शहीदों की कुर्बानी हमें ऊर्जा और प्रेरणा देती है।

इस मौके पर 'अमर शहीदों का पैगाम, जारी रखना है संग्राम' शीर्षक से एक पर्चा भी निकाला गया। इसे दिल्ली की बसों में व मजदूर बस्तियों में व्यापक संख्या में बांटा गया। इस पर्चे में बताया गया कि 'भगत सिंह की लड़ाई सिर्फ अंग्रेजी हुकूमत के खिलाफ नहीं थी। वह हर किस्म के शोषण के खिलाफ लड़ रहे थे'।

बादली-नरेला इलाके में दो दिन का साइकिल अभियान

दिल्ली में 'नौजवान भारत सभा' और 'बिगुल मजदूर दस्ता' के कार्यकर्ताओं ने दो दिन की साइकिल रैली निकाली। 22 मार्च को सुबह सात बजे से बादली से यह रैली शुरू हुई तथा बादली के राजा विहार, सूरज पार्क, समयपुर, यादव नगर, संजय कालोनी जे.जे. कैम्प होते हुए शाहबाद दौलतपुर के रास्ते शाहबाद डेयरी पहुँची। शाहबाद डेयरी की गलियों में जोरदार नारे लगाते हुए जगह-जगह नुक्कड़ सभायें की गयीं। इसके बाद रैली प्रह्लादपुर होते हुए, बेड़ाकलाँ, नया बाँस के रास्ते होलम्बी पहुँची। होलम्बी कलाँ में मेट्रो विहार 1 तथा दो में लाखों मज़दूरों की आबादी रहती है। मेट्रोविहार की गलियों में भी नारों, नुक्कड़ सभाओं के माध्यम से भगतसिंह के विचारों से लोगों को परिचित कराया गया। रैली में 'भगतसिंह का ये पैगाम, जागो मेहनतकश अवाम', भगतसिंह तुम ज़िन्दा हो, हम सब के संकल्पों में', 'भगतसिंह का ख्वाब अधूरा, इसी सदी में होगा पूरा', 'भगतसिंह ने दी आवाज़, बदलो-बदलो देश समाज', 'ख़त्म करो पूँजी का राज, लड़ो बनाओ लोकस्वराज' आदि नारे लगाए गए। वहाँ से साइकिल रैली शाहपुर गढ़ी होते हुए नरेला की पुनर्वास कालोनी के रास्ते सेक्टर ए-5 के पॉकेट 14 पहुँची और शाम आठ बजे यहीं पर पहले दिन की साइकिल रैली का समापन किया गया।

23 मार्च की सुबह साइकिल रैली नरेला के विभिन्न इलाकों में सेक्टर ए-5 तथा ए-6 के पॉकेट 4, 5, 8, 10, 11, 13 आदि में नुक्कड़ सभाएं करते हुए नरेशा पहुँची। नरेला के राजीव कालोनी, पंजाबी कालोनी, स्वतन्त्रनगर, कुरैनी आदि इलाकों से होते हुए रैली भोरगढ़ के फैक्टरी इलाकों में पहुँची। शाम को फैक्टरियों की छुट्टी होते ही मजदूरों की विशाल आबादी बाहर निकली तथा 'नौजवान भारत सभा' तथा 'बिगुल मज़दूर दस्ता' के कार्यकर्ताओं की बातों को ध्यान से सुना और पर्चे लिये। यहां नौ.भा.स. तथा 'बिगुल मज़दूर दस्ता' के कार्यकर्ताओं ने मज़दूरों को याद दिलाया कि भगतसिंह और उनके साथी मज़दूरों-किसानों की आज़ादी के लिए, एक समतामूलक समाज बनाने का ख्वाब आँखों में लिये हँसते हुए फाँसी के फन्दे पर झूल गये। पर आज ग्रेज़ों को इस देश से गये हुए 62 साल से ज़्यादा बीतने के बावजूद, तरह-तरह की चुनावी पार्टियाँ पूँजीपतियों की तिजोरी भरने तथा मेहनतकशों की ज़िन्दगी को तबाह-बर्बाद करने में लगी हैं।

दोपहर में रैली सिंधु बॉर्डर होते हुए कुण्डली औद्योगिक क्षेत्र पहुँची जहाँ लंच के लिए हजारों मज़दूर फैक्टरियों से बाहर आते हैं। वहाँ भी लोगों ने साइकिल रैली का ज़ोरदार ढंग से स्वागत किया। शाम को सात बजे साइकिल रैली का समापन हुआ।

गोरखपुर में शराब माफिया के ख़िलाफ़ नौजवान भारत सभा का संघर्ष रंग लाया

गोरखपुर के जंगल तुलसीराम बिछिया मलिन बस्ती में खुली सरकारी देशी शराब की दुकान मवालियों, अपराधियों और गुण्डों का अड्डा बनी हुई है। महिलाओं के साथ छेड़छाड़, मार-पीट, गाली-गलौज, पियक्कड़ों की धमाचौकड़ी, टुन्न होकर रास्ते में गिरे रहना रोज-रोज की बात बन चुकी है। इस दुकान का सबसे बुरा प्रभाव नई पीढ़ी पर पड़ रहा है। 14-15 साल के किशोरों का झुकाव शराब की ओर हो रहा है, कितने तो बाकायदा पियक्कड़ बन चुके हैं। शराबखोरी के साथ-साथ जुए की लत भी फैल रही है।

इस दुकान को बस्ती से बाहर हटवाने को लेकर नौजवान भारत सभा के नेतृत्व में बस्ती के लोग पिछले कई महीनों से आन्दोलन चला रहे हैं। प्रशासन बार-बार आश्वासन देने के सिवा कुछ नहीं कर रहा था। इसके विरोध में गत 6 अप्रैल को नौभास की अगुवाई में बस्ती के करीब 300-400 लोगों ने शराबखाने के सामने सड़क जाम करके ज़बर्दस्त प्रदर्शन किया। प्रदर्शन में बड़ी संख्या में महिलाएँ और नौजवान शामिल हुए।

धरनास्थल पर कार्यकर्ताओं ने कहा कि छोटे-छोटे काम-धन्धे करके मेहनत-मशक्कत से गुजारा करने वाले लोग जीवन की परेशानियों, तकलीफों को भुलाने के लिए शराब का सहारा लेते हैं लेकिन इसी चक्कर वे कब पेशेवर पियक्कड़ बन जाते हैं उन्हें खुद ही पता नहीं चलता है। जब उनकी खुमारी उतरती है तो अपने-आप को पहले से ज्यादा परेशान और जकड़ा हुआ पाते हैं। वे खुद तो तबाह होते ही हैं, उनका पूरा परिवार और बच्चों का भविष्य भी तबाह हो जाता है। सरकार सबकुछ जानकर भी दोगली नीति चलाती है। एक ओर वह करोड़ों रुपये खर्च करके शराबखोरी के खिलाफ प्रचार करती है और दूसरी ओर बस्ती-बस्ती में शराब की दुकानें खोलती है। इस मलिन बस्ती में मुहल्लेवासियों की इच्छा के खिलाफ सरकारी गुण्डई के दम पर दारू का अड्डा खोले रखना क्या साबित करता है? सरकार को आम नागरिकों और उनके परिवारों की फिक्र नहीं है बल्कि शराब की बिक्री से होने वाली अरबों रुपये की कमाई की चिन्ता है। हकीकत तो यह है कि सरकार चाहे जिस पार्टी की हो, सब यही चाहती हैं कि हम अपने शोषण-अत्याचार, गरीबी-बेरोजगारी, महंगाई-भ्रष्टाचार और रोज-रोज होने वाले अपमान के बारे में न सोचें और नशे में डूबे रहें।

पहले तो शराब के ठेकेदार के लोगों ने नौजवान सभा के कार्यकर्ताओं को डराने-धमकाने की कोशिश की लेकिन लोगों के उग्र तेवरों को देखकर प्रशासन को बीच में हस्तक्षेप करना पड़ा। थाने में पुलिस अधिकारियों और बस्ती के लोगों की मौजूदगी में ठेकेदार ने कहा कि वह तीन दिन के अन्दर अपनी दुकान हटा लेगा। इसके बाद प्रदर्शन समाप्त किया गया। लेकिन तीन दिन का समय बीत जाने के बाद भी दुकान बस्ती से हटाई नहीं गयी है। साफ है कि ठेकेदार को पुलिस और नेताओं से शह मिली हुई है। उल्लेखनीय है कि क्षेत्र के भाजपा पार्षद ने अपने लेटरपैड पर आबकारी विभाग को यह लिखकर दे दिया था कि बस्ती के लोग शराबखाना हटवाना नहीं चाहते हैं। नौभास द्वारा इस पत्र की प्रतियाँ बस्ती में बाँटने के बाद उसने झेंपते हुए आन्दोलन का समर्थन करने की बात कही लेकिन अन्दर-अन्दर ठेकेदार का समर्थन जारी है।

नौभास और बस्ती के लोगों ने दुकान हटने तक आन्दोलन पर डटे रहने का संकल्प किया है।

मन्दी के विरोध में दुनियाभर में फैलता जनआक्रोश

इतिहास फिर करवट बदल रहा है

अक्टूबर 2008 के पहले हफ्ते से विश्व पूँजीवाद के बुरे दिनों की नई शुरुआत हुई। तभी से पूँजीवाद के भाग्य पर राहू-केतू मँडराने लगे। अब शनि देव भी रूठ गये लगते हैं। बहुत यज्ञ हो लिये। सारे मंत्र पढ़े जा चुके हैं। लेकिन बुरे ग्रहों से इसका पीछा छूट ही नहीं रहा है। भविष्य में क्या होने वाला है? सही-सही कोई नहीं बता सकता। लेकिन जो हो रहा है वो पूँजीवाद के लिये अशुभ है।

पूँजीवाद के कलमघसीटों ने 'इतिहास के अन्त' का ऐलान किया था। फुकोयामा जैसे पूंजीवादी बौद्धिक पहलवानों ने ठोंक-बजाकर कहा था कि पूँजीवादी अर्थव्यवस्था और पूँजीवादी लोकतांत्रिक संसदीय प्रणाली सबसे बेहतर है। कहा गया था कि इनका कोई विकल्प नहीं है। लेकिन अब वे थूककर चाट रहे हैं। इतिहास के अन्त की बातें करने वाले फुकोयामा अब मान रहे हैं कि पूँजीवादी व्यवस्था के अन्तरविरोध गंभीर हैं। 'इतिहास के अन्त' का अन्त हो चुका है। इतिहास फिर से करवट बदल रहा है। इसके साथ ही अति-साम्राज्यवाद, उत्तर संरचनावाद, नव-उदारीकरण जैसे राग अलापने वालों के गले खराब हैं। विश्वव्यापी आर्थिक संकट के विस्फोट ने ही ऐसे सभी सिद्धान्तों को धज्जियाँ उड़ा दीं।

अमेरिकी वित्तीय बाजार से शुरू हुई मन्दी की आग पूरे विश्व में फैल चुकी है। अरबों डालरों के बेलआउट पैकेजों की बरसात भी इस आग पर काबू पाने में नाकाम रही है। सम्पत्ति रिस-रिसकर नीचे आती है, यह दावा करने वाले पूँजीवादी 'ट्रिकल-डाउन' सिद्धान्त से अब कुछ भी छनकर नीचे नहीं आ रहा है सिवाय तालाबन्दियों, छँटनियों के। हाँ, लेकिन बेलआउट पैकेजों की लगातार जारी बरसात से कम्पनियों और बैंकरों की तिजोरियाँ जरूर लबालब भर रही हैं।

इस सारी प्रक्रिया में एक नया अधयाय अब जुड़ रहा है। वह है जन-आक्रोश का दुनिया के बहुत सारे देशों में फैलना जो साधारण हड़तालों से लेकर पुलिस के साथ खूनी झड़पों के रूप में सामने आ रहा है। इतिहास खरगोश की चाल चलता है, कभी बहुत तेज, फिर छलाँगों के रूप में और कभी एकदम सोया लगता है। पिछले 30-32 वर्षो से विश्व स्तर पर ही सब कुछ ठहरा-ठहरा सा लगता था। लेकिन अब हालत बदल रही है। एक बार फिर जनसंघर्षों की हवा गर्म हो रही है।

अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष के मैनेजिंग डायरेक्टर डोमिनिक स्त्रॉस काहन के अनुसार इस वर्ष विश्व अर्थव्यवस्था की वृद्धि दर शून्य से भी नीचे रहेगी। अफ्रीका के बारे में उन्होंने कहा कि दसियों लाख लोग गरीबी में धकेल दिये जायेंगे और वहां की नाजुक राजनीतिक व्यवस्था की कड़ी परीक्षा ली जायेगी। विश्व बैंक की अभी जारी एक रिपोर्ट में कहा गया है कि अमरीका के हाउसिंग बूम के बाद आयी मन्दी ने गरीब देशों को बर्बादी की तरफ धकेल दिया है जिनका असल समस्या से कुछ भी लेना-देना नहीं है। विश्व बैंक के अध्यक्ष राबर्ट ज़ोयलिक भी आने वाले जन-तूफान से डरते दिखाई देते हैं। उनका कहना है कि इस आर्थिक तूफान को विकासशील देशों में घुसने से हर हाल में बचाया जाना चाहिये और पूँजी निवेश के ज़रिये और नौकरियाँ पैदी करनी होंगी ताकि खासकर इन देशों में सामाजिक और राजनीतिक अशान्ति से बचा जा सके।

अफ्रीका और लातिनी अमरीका के कई तेल निर्यातक देशों के लिये कठोर समय है। वहाँ तेल की कीमतें 69 प्रतिशत तक गिर चुकी हैं और यह आँकड़ा सिर्फ दिसम्बर तक का है। ब्राजील जैसे विकासशील देश ने आठ वर्षों में अपना पहला व्यपार घाटा पेश किया जब्कि उसके निर्यात 28 प्रतिशत तक गिर चुके हैं।

और इस सबके विरोध में जहाँ पहले-पहल मध्यवर्ग ने आवाज उठाई भी अब वहह्न इन देशों के मजदूरों ने भी विरोध की इस आवाज में अपनी आवाज मिला दी है और नतीजा जबर्दस्त बड़ी-बड़ी हड़तालों और सत्ता के साथ उग्र एवं हिंसक झड़पों के रूप में सामने आ रहा है। अमेरिका, लातिन अमरीका, इंग्लैंड, यूरोप और एशिया तक सभी जगह विरोध की ज्वाला दहक रही है। यूरोप तो विरोध का केन्द्र बना हुआ है। ज़रा दुनियाभर में चल रहे संघर्षों पर एक नज़र डालते हैं:

आइसलैंड

आइसलैंड जो दुनिया के सबसे विकसित एवं सबसे अधिक उत्पादक देशों में गिना जाता है पिछले दिनों दिवालिया होने के कगार पर पहुँच गया। अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष 110 अरब डालर की राहत लेकर भी पहुँचा पर कोई लाभ नहीं हुआ। आइसलैंड की राजधानी रेकजाविक हड़तालियों और पुलिस का अखाड़ा बना हुआ है। हड़तालियों को संसद तक पहुँचने से रोकने के लिये पुलिस ने उसके चारों तरफ बड़े स्तर पर आग जलाने का प्रबंध किया है। आइसलैंड की पूरी सरकार ने विरोध प्रदर्शनों के दबाव में इस्तीफा दे दिया है जिसे इस मन्दी की पहली अहम राजनीतिक क्षति कहा जा रहा है।

कुछ ही वर्ष पहले पूरा पूँजीवादी मीडिया पूर्वी यूरोप के देशों में खुले पूँजीवाद की स्थापना का जश्न मना रहा था। भूमण्डलीकरण के दौर में विकसित पूँजीवादी देशों को इन देशों में निवेश के लिए तैयार बाज़ार मिला और सारी कम्पनियाँ वहाँ निवेश के लिए दौड़ पड़ीं। आज मन्दी की मार से इन देशों की हालत लगातार बिगड़ती जा रही है और वहाँ के मेहनतकश सड़कों पर उतरने लगे हैं।

लातविया

बालटिक सागर के किनारे बसे इस शहर में 10000 से भी अधिक लोगों ने विरोध मार्च किया जो कि देर रात दंगे का रूप धारण कर गया जब प्रदर्शनकारियों का एक हिस्सा संसद की तरफ मुड़ गया और दंगा निरोधक पुलिस के साथ भिड़ गया। इसी दिन ऐसी ही घटनाएँ लिथुअनिया की राजधानी विलनियस में भी देखने को मिलीं। बाल्टिक क्षेत्र के सबसे बड़े बैंक 'स्वीड बैंक ऑफ स्वीडन' के मुताबिक लातविया की अर्थव्यवस्था में 10 प्रतिशत तक की मन्दी आयेगी जो पहले के अनुमान के दुगने से भी अधिक है। स्वीड बैंक ने एस्तोनिया और लिथुआनिया के बारे में कहा है कि इस देशों की अर्थव्यवस्थाएँ क्रमश: 7 और 4.5 फीसदी तक सिकुड़ सकती हैं।

फ्रांस

मन्दी की मार झेल रहे फ्रांस की सरकार ने कहा है कि इस वर्ष अर्थव्यवस्था एक 1.5 प्रतिशत तक सिमट जायेगी। लेकिन विशेषज्ञों का कहना है कि यह आँकड़ा 3 प्रतिशत को भी पार कर जायेगा। हमेशा की तरह सरकार संकट का पूरा बोझ मज़दूरों के सिर पर पटक देना चाहती है और उन्हें मिलने वाली सुविधाओं में लगातार कटौती की जा रही है। इसके विरोध में 19 मार्च को फ्रांस ने इस मन्दी के दौर की सबसे बड़ी हड़ताल देखी जिसमें 30 लाख लोगों ने प्रत्यक्ष भागीदारी की। इस हड़ताल को देश की 80 फीसदी आबादी का समर्थन प्राप्त था। मार्सेई और पेरिस इस हड़ताल का केन्द्र बने हुए थे। यह हड़ताल राष्ट्रपति निकोलस सारकोजी की आर्थिक नीतियों के विरोध में हुई थी। हड़तालियों की माँग थी कि उनके वेतन में वृद्धि की जाये। स्कूल, न्यायालय, डाकघर, विश्वविद्यालय, यहाँ तक तक कि अस्पताल भी बन्द रहे। पूरे देश में 200 से अधिक मार्च आयोजित किये गये। पेरिस की पुलिस के मुताबिक केवल पेरिस में 85,000 लोगों ने प्रदर्शन किया द्धअसल गिनती इससे कहह्न अधिक हैत्रू। पेरिस में यह मार्च पाँच घण्टों तक पैलेस डे ला रिपब्लिक से पैलेस डे ला नेशन तक चला। यह एक बेहद उग्र प्रदर्शन था। अँधेरा होते ही पूरे क्षेत्र में सैकड़ों की तादाद में पुलिसकर्मी तैनात किये गये लेकिन इससे कुछ न बना। उग्र भीड़ ने जमकर हंगामा किया और जगह-जगह पुलिस से टक्कर ली।

यही नहीं संकट से फैले आक्रोश की लपटें फ्रांस के शहर स्त्रासबर्ग में हो रहे नाटो की शिखर बैठक तक भी पहुँच गयीं। सरकोज़ी की सरकार ने प्रदर्शनकारियों को रोकने के लिए ज़बर्दस्त इन्तज़ाम किया था। लेकिन पुलिस दमन का सामना युवाओं ने पेट्रोल बमों से किया। भड़की जनता ने कई सरकारी दफ्तरों को आग लगा दी। फ्रांसीसी और जर्मन पुलिस दवारा चलाये इस दमन आपरेशन पर 15 करोड़ यूरो का खर्चा आया।

इस बीच पिथौवियर्स नामक शहर में एक अमेरिकी फर्म 3 एम द्वारा संचालित फैक्टरी के मज़दूरों को जब फैक्टरी में की जा रही छँटनी की खबर मिली तो उन्होंने अपने अफसर को पूरी रात तक बंदी बनाये रखा। ऐसी कई घटनाओं की खबरें पूरे फ्रांस से मिल रही हैं। पूरे फ्रांस में चल रहे प्रदर्शनों में चल रहे संघर्षों में अहम बात यह है कि अब इन संघर्षों में औद्योगिक मजदूरों भी बड़ी गिनती में शामिल हो चुके हैं जो कि एक अच्छा संकेत है।

आयरलैंड

1967 से जब से आयरिश सरकार ने रिकार्ड रखना शुरू किया है तब से अब तक आयरलैंड में सबसे अधिक बेरोजगारों की संख्या इस समय है। 28 मार्च को राजधानी डबलिन की सड़कें लगभग दस लाख प्रदर्शनकारियों से भर गयीं।

आयरिश कांग्रेस ऑफ ट्रेड यूनियन्स की ओर से आयोजित इस मार्च ने सरकार को चेतावनी दी कि पब्लिक सेक्टर के कर्मचारियों के वेतन में और कटौती न करे। बैंकरों के पेटों में जनता के कई बिलियन यूरो पहले ही ठूँस चुकी सरकार पूरी बेहयाई के साथ बयान दे रही है कि वेतन कटौतियाँ जरूरी हैं क्योंकि घाटे के फूलते गुब्बारे को नियंत्रित का करने और कोई रास्ता नहीं है। सरकार ने 350,000 आयरिश मज़दूरों के वेतन में 7 प्रतिशत की कटौती की योजना भी पेश की है।

ब्रिटेन इस वर्ष क्रोध की गर्मी झेलेगा

यह कथन हमारा नहीं बल्कि ब्रिटेन की पुलिस का है। ब्रिटेन की पुलिस 'क्रोध की गर्मी' के लिये तैयारियाँ भी कर रही है क्योंकि मन्दी के शिकार लोग वित्तीय संस्थाओं के विरोध में सड़को पर उतर रहे हैं। एक सीनियर पुलिस अधिकारी का कहना है कि इस वर्ष गर्मियों में अस्सी के दशक जैसे या उससे भी बदतर 'दंगे' होने की सम्भावना है। पिछले दिनों ब्रिटेन में सैकड़ों तेल रिफाइनरी मज़दूरों नें प्रवासी मजदूरों के प्रयोग के विरोध में हड़तालें की। अधिकारियों के अनुसार अब बड़े विरोध प्रदर्शनों की संख्या और बढ़ सकती है। इस सब में एक कड़ी यह भी है कि काम्बेट-18 नामक नवफासीवादी संगठन बेरोज़गारी के ख़िलाफ़ मज़दूरों के गुस्से को प्रवासी मज़दूरों के ख़िलाफ़ मोड़ने की चाल चल रहा है।

जी-20 की मीटिंग को झेलना पड़ा जन प्रतिरोध

अप्रैल में जी-20 देशों की शिखर बैठक लंदन में हुई। पर लंदन का माहौल उनके लिये खुशगवार नहीं रहा। जब जी-20 की मीटिंग चल ही रही थी तो उसी समय बाहर जंग का माहौल बना हुआ था और तीन दिन तक वहाँ हजारों लोग पुलिस से झड़पें लेते रहे। यह लोग दुनिया के पूँजीवादी गिद्धों के विरोध में एकत्रित हुए थे। तीन दिन तक चले ये प्रदर्शन गरीबी, भुखमरी, ग्लोबल वार्मिंग, फिलिस्तीनी जनता के दमन और अफगानिस्तान युद्ध पर केन्द्रित थे लेकिन इन प्रदर्शनों में बार-बार जो बात उभरकर आ रही थी वह थी विश्वव्यापी आर्थिक संकट। प्रदर्शनकारी सरकार-विरोधी, पूँजीवाद विरोधी और धन विरोधी नारों की तख्तियाँ पकड़े हुए चल रहे थे। प्रदर्शन इतना उग्र था कि एक पत्रकार ने इसकी तुलना 1990 के 'पोल टैक्स दंगों' से की। कानून व्यवस्था कायम करने के नाम पर पुलिस पूरे आतंकी रूप में सामने आई। एक जगह तो प्रदर्शनकारियों को आठ घण्टे बैरीकेडों से घेरकर रखा गया। किसी को पानी पीने तक की अनुमति तक नहीं दी गयी। तथाकथित पूँजीवादी जनवाद अपने असली निर्मम रूप में सामने आया। प्रदर्शनकारी बड़ी गिनती में जख्मी तथा बेहोश भी हुए। एक व्यक्ति को अपनी जान गँवानी पड़ी।

विरोध को हासिल हुआ मन्दी का ईंधन

अमेरिका में बेरोजगारी दर 7.6 तक पहुँच चुकी है और लगातार बढ़ रही है। एक मीडिया कम्पनी के सर्वेक्षण के अनुसार नौकरियों की असुरक्षा और आर्थिक संकट के कारण 32 प्रतिशत अमेरिकी लोग मानसिक रोगों के शिकार हैं। अर्थशास्त्रियों ने चेतावनी दी है कि बेरोजगारी की दर साल के आखिर तक दो अंकों में पहुँच जायेगी। स्पेन में केवल जनवरी महीने में ही 2 लाख मजदूर अपने काम से हाथ धो बैठे। बेरोजगारी दर वहाँ 14 प्रतिशत पहुँच गई है। फ्रांस जैसी भारी हड़ताल और हिंसक प्रदर्शनों का सामना इटली की सत्ता को अक्टूबर में करना पड़ा जब प्रधानमंत्री बेरलुस्कोनी ने शिक्षा बजट पर कैंची चलाने की केशिश की। दिसम्बर में हजारों लोगों ने मैक्सिको शहर की गलियों को भर दिया। वे राष्ट्रपति फिलिप की नव-उदारवादी आथिक नीतियों के ख़िलाफ़ थे।

जब जनरल मोटर्स ने पूरे विश्व में अपनी कम्पनियों में छँटनी की बात कही तो कंपनी के जर्मनी स्थित मुख्य दफ्तरों पर 15000 वर्करों ने विरोध प्रदर्शन किया।

चीन

पूँजीवादी पुनर्स्थापना से लेकर आज तक चीन की जुझारू जनता ने नए पूँजीवादी सत्ताधारियों द्धनकली कम्युनिस्टोंत्रू को कभी भी चैन की नींद नहीं सोने दिया है। आज जब चीन भी विश्वव्यापी आर्थिक संकट से अछूता नहीं है उस समय भी चीनी जनता चुपचाप नहीं बैठी है। मन्दी के चलते दो करोड़ चीनी मजदूरों को काम से हाथ धोना पड़ा। बेरोजगारी दर 30 प्रतिशत तक पहुँच चुकी है। वर्ष 2008 के अंत तक साढ़े सात करोड़ स्नातक काम की तलाश में भटक रहे थे। 2006 में चीन में 90 हजार हड़तालें हुईं जिनकी संख्या 2008 में चार गुना हो गयी। चीनी अधिकारी पुलिस बलों को मजदूरों से निपटने की ट्रेनिंग दे रहे हैं। राष्ट्रपति हू जिनताओ को अन्देशा है कि मजदूरों में सुलगता यह आक्रोश सुनामी की तरह फट पड़ सकता है। इसलिए उन्होंने किसी भी हालत में फौज को पार्टी के प्रति वफ़ादार रहने का हुक्म दिया है।

आज पूरे विश्व में पूँजीवाद के विरोध में एक ज़बरदस्त उभार है और यह लहर पूँजीवाद के आर्थिक संकटों को गहरा बना सकती है, कुछ देशों के राजनीतिक समीकरण बदल भी सकते हैं। लेकिन इसे यह भ्रम नहीं होना चाहिए कि विरोध की यह लहर पूँजीवाद को खत्म कर सकती है। कारण स्पष्ट है कि स्थिति का लाभ उठाकर संकट को क्रान्ति में बदल देने वाली शक्तियाँ, यानी सर्वहारा का हरावल संगठन बिखरा हुआ और रास्ते की तलाश में है। मज़दूरों का क्रान्तिकारी ट्रेड यूनियन आन्दोलन तथा अन्य मेहनतकश जनता के जुझारू संगठन मौजूद नहीं हैं। इन सभी जगहों पर चल रहे ये संघर्ष अभी संगठित नहीं हैं। इनमें स्वयंस्फूर्तता अधिक है। अगर कहह्न संगठित हैं भी वहाँ भी संघर्षों की बागडोर आमतौर पर बुर्जुआ ट्रेडयूनियनवादियों, रैडिकल निम्न-पूँजीवादियों, अराजकतावादियों तथा कई जगहों पर संशोधनवादियों के हाथों में है।

लेकिन इन प्रदर्शनों और हड़तालों का इतिहास में महत्वपूर्ण स्थान है। इन हड़तालों में एक अहम बात यह रही है कि मध्यवर्ग के विरोध से शुरू हुई इन हड़तालों में अब सर्वहारा वर्ग बढ़चढ़कर भागीदारी कर रहा है। ये हड़तालें और प्रदर्शन गतिरोध के उस दौर को तोड़ती हैं जिसमें रोशनी की एक किरण भी आती हुई महसूस नहीं होती थी। इसने पूँजीवाद के अमर होने के झूठे दावों को सरेयाम बेपर्दा कर दिया है। भले ही कुछ वर्षों में विश्व आर्थिक संकट की सुनामी शाँत हो जाये लेकिन इस पर इस वित्तीय महाध्वंस से विश्व स्तर पर कई नये आर्थिक, राजनीतिक एवं सामाजिक समीकरण उभरेंगे और ये समीकरण इक्कीसवी सदी की नयी समाजवादी क्रान्तियों को एक नया वेग और बल देंगे।

– अजयपाल

जनवादी जनतन्त्र : पूँजीवाद के लिए सबसे अच्छा राजनीतिक खोल

"धन-दौलत" की सार्विक सत्ता जनवादी जनतन्त्र में **ज़्यादा यक़ीनी** इसलिए भी होती है कि वह राजनीतिक मशीनरी की अलग-अलग कर्मियों, पूँजीवाद के निकम्मे राजनीतिक खोल पर निर्भर नहीं होती। जनवादी जनतन्त्र पूँजीवाद के लिए श्रेष्ठतर सम्भव राजनीतिक खोल है और इसलिए (पालचीन्स्की, चेर्नोव, त्सेरेतेली और मण्डली की मदद से) इस श्रेष्ठतम खोल पर अधिकार करके पूँजी अपनी सत्ता को इतने विश्वसनीय ढंग से, इतने यक़ीनी तौर से जमा लेती है कि बुर्जुआ-जनवादी जनतन्त्र में व्यक्तियों, संस्थाओं या पार्टियों की **कोई भी** अदला-बदली उस सत्ता को नहीं हिल सकती।

हमें यह भी नोट करना चाहिए कि एंगेलस सार्विक मताधिकार को भी पूर्णतक स्पष्टता के साथ बुर्जुआ वर्ग के प्रभुत्व का अस्त्र कहते है।

• • •

मार्क्स ने लिखा था : "कम्यून संसदीय नहीं, बल्कि एक कार्यशील संगठन था, जो कार्यकारी और विधि कारी, दोनों कार्य साथ-साथ करता था...

...तीन या छः साल में एक बार यह तय करने के बजाय कि शासक वर्ग का कौन सदस्य संसद में जनता का प्रतिनिधित्व तथा दमन करेगा (ver-und sertreten) सर्वमताधिकार को अब कम्यूनों में संगठित जनता के उसी प्रकार काम में आना था, जिस प्रकार अपने व्यवसाय के लिए मज़दूर, मैनेजर तथा मुनीम तलाश करनेवाले हर एक मालिक के लिए व्यक्तिगत मताधिकार काम में आता है।"

• • •

केवल संसदीय-सांविधानिक राजतन्त्रों में ही नहीं, बल्कि अधिक से अधिक जनवादी जनतन्त्रों में भी बुर्जुआ संसदीय व्यवस्था का सच्चा सार कुछ वर्षों में एक बार यह फ़ैसला करना ही है कि शासक वर्ग का कौन सदस्य संसद में जनता का दमन और उत्पीड़न करेगा।

• • •

"संसदीय नहीं, बल्कि कार्यशील संगठन" – आज के संसदबाज़ों और

लेनिन

सामाजिक-जनवाद के संसदीय "पालतू कुत्तों" के मुँह पर यह भरपूर तमाचा है! अमेरिका से स्विट्ज़रलैण्ड तक, फ़्रांस से इंग्लैण्ड, नार्वे आदि तक चाहे किसी संसदीय देश को ले लीजिये – इन देशों में "राज्य" के असली काम की तामील पर्दे की ओट में की जाती है और उसे महक़मे, दफ़्तर और फ़ौजी सदर-मुक़ाम करते हैं। संसद को "आम जनता" को बेवक़ूफ़ बनाने के विशेष उद्देश्य से बकवास करने के लिए छोड़ दिय जाता है। यह बात उतनी सच्ची है कि रूसी जनतन्त्र तक में, जो एक बुर्जुआ-जनवादी जनतन्त्र है, संसदीय व्यवस्था की ये सारी बुराइयाँ असली संसद के बनने से पहले ही फ़ौरन ज़ाहिर हो गयीं। सड़ी हुई कूपमण्डूकता के स्कोबेलेव और त्सेरेतेली, चेर्नोव और बवक्सेन्त्येव जैसे सूरमा सोवियतों तक को अत्यन्त घृणित बुर्जुआ संसदीयता के ढंग से गन्दा करने में सफल हो गये हैं, उन्हें महज़ गप्पबाज़ी के अड्डों में बदल दिया गया है। सोवियतों के अन्दर श्रीमान "समाजवादी" मन्त्रिगण गाँवों के भोले-भाले लोगों को जफ़्फ़ाज़ी और प्रस्तावों से ठग रहे हैं। सरकार के अन्दर निरन्तर जोड़-तोड़ चल रही है, जिससे कि एक ओर तो अधिक से अधिक समाजवादी-क्रान्तिकारियों और मेंशेविकों को बारी-बारी से इज़्ज़त और आमदनी की नौकरियों की "दावत" में हिस्सेदार बनाया जा सके और दूसरी ओर, जनता का "ध्यान भी बँटा रहे"। और तब तक "राज्य" का असली "काम" सरकारी दफ़्तर और फ़ौजी सदर-मुक़ाम "चलाते" हैं!

• • •

बुर्जुआ समाज की ज़रख़रीद तथा गलित संसदीय व्यवस्था की जगह कम्यून ऐसी संस्थाएं क़ायम करता है, जिनके अन्दर राय देने और बहस करने की स्वतंत्रता पतित होकर प्रवंचना नहीं बनतीं, क्योंकि संसद-सदस्यों को ख़ुद काम करना पड़ता है, अपने बनाये हुए क़ानूनों को ख़ुद ही लागू करना पड़ता है, उनके परिणामों की जीवन की कसौटी पर स्वयं परीक्षा करनी पड़ती है और अपने मतदाताओं के प्रति उन्हें प्रत्यक्ष रूप से ज़िम्मेदार होना पड़ता है। प्रतिनिधिमूलक संस्थाएं बरक़रार रहती हैं, लेकिन विशेष व्यवस्था के रूप में, क़ानून बनाने और क़ानून लागू करने के कामों के बीच विभाजन के रूप में, सदस्यों की विशेषाधिकार-पूर्ण संस्थाओं के बिना जनवाद की, सर्वहारा जनवाद की भी कल्पना हम कर सकते हैं और हमें करनी चाहिए, अगर बुर्जुआ समाज की आलोचना हमारे लिए कोरा शब्दजाल नहीं है, अगर बुर्जुआ वर्ग के प्रभुत्व को उलटने की हमारी इच्छा गम्भीर और सच्ची हैं, न कि मेंशेविकों और समाजवादी-क्रान्तिकारियों की तरह, शीडेमान, लेजियन, सेम्बा और वानउरवेल्डे जैसे लोगों की तरह मज़दूरों के वोट पकड़ने के लिए "चुनाव" का नारा भर।

(राज्य और क्रान्ति से)

लेनिन के जन्मदिवस (22 अप्रैल) के अवसर पर

सुब्बोत्निक पर लेनिन

1 मई 1920 को रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बोल्शेविक) की केन्द्रीय समिति ने राष्ट्रव्यापी सुब्बोत्निक संगठित किया। उस दिन सर्वत्र देश में लोगों ने सुब्बोत्निक पर काम किया। फ़ौजी रंगरूट और मैं भी – यह क्रेमलिन में था – क्रेमलिन चौक में कुछ काम करने के लिए गये। उस समय क्रेमलिन चौक अंशतः तरह-तरह के कूड़े-करकट और निर्माण-सामग्रियों से भरा हुआ था तथा इससे सामान्य फ़ौजी ट्रेनिंग में बाधा पड़ती थी।

कोर्स-कमिसार के रूप में मैं दायें बाजू था। तभी क्रेमलिन कमाण्डेण्ट मेरे पास आये और कहा :

"साथी लेनिन सुब्बोत्निक में हिस्सा लेने के लिए आये हैं।"

मैंने इल्यीच को देखा। वह पुराने सूट और जूतों में हमसे कुछ क़दम दूर खड़े आदेश की प्रतीक्षा कर रहे थे।

मैंने उन्हें सुझाव दिया कि वरिष्ठ साथी के रूप में उन्हें हमारे साथ मेरे दायें खड़ा होना चाहिए। उन्होंने अपना स्थान बड़ी फुर्ती से यह जल्दी-जल्दी कहते हुए ग्रहण कर लिया :

"बस बता दीजिये कि मुझे क्या करना है।"

सुब्बोत्निक के संचालक ने आदेश दिया :

"दायें – घूम!"

हमें जो काम करना था, उसकी ओर बढ़े। हमें दो-दो की जोड़ियों में काम करना था और इस प्रकार व्लादीमिर इल्यीच और मैं लट्ठे ढोने लगे।

वह लट्ठे के पतले सिरे की ओर न जाकर मोटे सिरे की ओर चले गये और उसे पकड़कर उठाने की कोशिश करने लगे, जबकि मैं चाहता था कि वह लट्ठे को पतले सिरे की ओर से पकड़कर उठायें। हम इस पर बहस करने लगे।

"आपको," उन्होंने कहा, "मुझसे भारी वजन ले जाना पड़ता है।"

मैंने उन्हें दिखाया कि मैं ठीक कर रहा हूँ। "क्योंकि," मैंने उनसे कहा, "आप 50 साल के हैं और मैं 28 साल का।"

उन्होंने बड़े अच्छे ढंग से काम किया। वह धीरे-धीरे नहीं, बल्कि दौड़कर दूसरों से आगे निकल जाते थे, मानो वह यह दिखाना चाहते हों कि तेज़ी से काम करना ज़रूरी है। मैं थक गया और वस्तुतः काम कर रहे सभी लोग सुस्ताने के लिए बैठ गये। साथी लेनिन रंगरूटों के साथ बैठ गये।

सूरज तेज़ी से चमक रहा था और संगीत काम करते हुए लोगों को प्रेरणा प्रदान कर रहा था। उस क्षण सभी ने महसूस किया कि शारीरिक श्रम से जितनी ख़ुशी मिलती है, उतनी किसी भी चीज़ से नहीं। टोली में से किसी ने साथी लेनिन की ओर एक सिगरेट बढ़ायी।

"नहीं, शुक्रिया, मैं सिगरेट नहीं पीता," उन्होंने उत्तर दिया। "मुझे याद है कि जब मैं माध्यमिक स्कूल में पढ़ता था, तो मैंने दूसरे लड़कों के साथ इतनी सिगरेटें पी थीं कि सर चकराने लगा था। तबसे मैंने कभी सिगरेट नहीं पी।"

मध्यान्तर के बाद हमें कुछ बलूत की भारी सिल्लियाँ ले जानी थीं। छः-छः लोगों ने मिलकर उन्हें थूनियों पर उठाकर ढोया। उनकी ढुलाई के दौरान हमने एक-दो बार आराम किया।

व्लादीमिर इल्यीच ने रंगरूटों के साथ चार घण्टे काम किया।

वे चार घण्टे, जो मैंने लेनिन के साथ कठिन शारीरिक श्रम करते हुए बिताये, मेरी स्मृति मे जीवनभर बने रहेंगे।

इ. बोरीसोव

सुब्बोतनिक : यह नाम उस अवैतनिक काम को दिया गया था जो सोवियत संघ के मेहनतकश छुट्टी के दिनों में अथवा अपने काम के घण्टों के बाद स्वेच्छा से देश के लिए करते थे। पहले सुब्बोतनिक **(अवैतनिक काम)** की व्यवस्था 10 मई, 1919 को, एक शनिवार के दिन मास्को-कज़ान रेल के सोरटीरोवोश्नाया डिपो के मज़दूरों की पहलक़दमी पर की गयी थी (रूसी भाषा में शनिवार को सुबोता कहते हैं, इसलिए इस आन्दोलन का नाम सुब्बोतनिक पड़ा था)। सोवियत सत्ता के प्रारम्भिक वर्षों में तथा महान देशभक्तिपूर्ण युद्ध के दौरान सुबोतनिकों के इस आन्दोलन ने काफ़ी व्यापक रूप ग्रहण कर लिया था। लेनिन सहित सभी कम्युनिस्ट नेता खुद इन सुब्बोतनिकों में भाग लेते थे और मेहनतकशों को प्रेरित करते थे कि वे अपने राज को मज़बूत करने के लिए स्वेच्छा से काम करें। यह इस बात का भी प्रतीक था कि जब मज़दूर वर्ग शोषक मालिकों के लिए नहीं बल्कि खुद अपने लिए काम करता है तो श्रम करना बोझ नहीं रह जाता बल्कि उत्साह और आनन्द का स्रोत बन जाता है।

चीन के राजकीय उपक्रम भ्रष्ट, मजदूर त्रस्त और युवा बेरोज़गार

एक राजकीय उपक्रम के मज़दूरों द्वारा चीन की कथित कम्युनिस्ट पार्टी को लिखा पत्र

चीन में पूंजीवाद की पुनर्स्थापना के बाद मजदूरों-किसानों के अधिकार-सुविधाएं छीनने की जो प्रक्रिया शुरू हुई थी, वह अब चरम पर पहुंच चुकी है। ''सुधारों'' से पहले के चीन का उजाला तबाही-बर्बादी के बादलों से ढँक गया है और वहां दुखों और शोषण का अँधेरा व्याप्त है। 1980 के बाद शुरू हुए "सुधारों" के बाद राज्य के स्वामित्व वाले अधिकांश उपक्रमों को या तो बेच दिया गया है या उन्हें मुट्ठीभर धनिकों के लिए इस्तेमाल किया जा रहा है। इन उपक्रमों को अपने खून-पसीने से तैयार करने वाले मजदूरों की स्थिति दयनीय है। उनमें से अधिकांश की छँटनी कर दी गई है और बाकी से ठेके पर काम लिया जा रहा है, उन्हें किसी प्रकार की सुरक्षा की गारण्टी नहीं प्राप्त है। यहाँ हम राज्य के स्वामित्व वाले एक उपक्रम के मजदूर प्रतिनिधि द्वारा कम्युनिस्ट नामधारी संशोधनवादी पार्टी को लिखे गए पत्र के सम्पादित अंश प्रस्तुत कर रहे हैं। अनेक लेखकों के विवरणों से यह समझना कठिन नहीं है कि पूरे चीन के राजकीय उपक्रमों की स्थिति कमोबेश इस पत्र में बयान की गई स्थितियों जैसी ही है। साथ ही आर्थिक मंदी से प्रभावित चीन की ''चमत्कारी'' अर्थव्यवस्था पर नज़र डालने से भी वहां वर्गों के तीखे होते संघर्ष, मजदूरों-किसानों-नौजवानों की स्थितियां, बेरोजगारी की बढ़ती दर और बढ़ते सामाजिक असंतोष का भी अंदाजा लगता है। - सम्पादक

चीन की कम्युनिस्ट पार्टी के महासचिव हू जिनताओ और पार्टी की 17वीं कांग्रेस के अध्यक्ष मंडल और उसकी कांग्रेस के सदस्यों के नाम:

...चीन की कम्युनिस्ट पार्टी की 17वीं कांग्रेस में चीन जनता की समस्याओं को सुलझाने के लिए लोकतांत्रिक, न्यायपूर्ण और समान तरीके अपनाने की बात की गई। लेकिन हमारी फैक्ट्री में न तो लोकतंत्र है न समानता और न ही न्याय। ''सुधारों'' की शुरुआत के साथ ही हमारी फैक्ट्री के नेताओं ने जनता की सामूहिक संपत्ति का दुरुपयोग किया है और मजदूरों के हितों को गंभीर क्षति पहुंचाई है। हमने उनके खिलाफ कठोर संघर्ष किया लेकिन सरकार के उच्च अधिकारियों से कोई समर्थन या मदद नहीं मिली। राजकीय विभाग में भ्रष्आचार के आरोपों को देखने वाला ब्यूरो भी हमारे मामले को लंबे समय तक टालता रहा, और हाल ही में इस भ्रष्टाचार की जानकारी देने के लिए बीजिंग जाने वाले हमारे प्रतिनिधियों पर हमले का सहारा लिया। अब मैं अपनी स्थिति का विस्तारपूवर्क बयान करूंगा:

सार्वजनिक उपक्रमों के मज़दूर नये पेंशन कानून के ख़िलाफ़ प्रदर्शन करते हुए

मैं ज़िआन शहर में रहता हूं, और ज़िआन की रेक्टिफिकेशन-ट्रांसफॉर्मर (एक प्रकार का इलेक्ट्रॉनिक इंटरफेस) फैक्ट्री में काम करता हूं, जो आधिकारिक रूप से चीन के ज़िआन पश्चिमी विद्युतीय कॉरपोरेशन की शाखा है जिसका प्रबंधन सीधे केंद्र सरकार द्वारा किया जाता है। 1960 के दशक में लगभग 12 मजदूरों ने हमारी फैक्ट्री स्वायत्त तरीके से खुद ही तैयार की थी और उसके बाद से यह एक विशाल सामूहिक उपक्रम में तब्दील हो चुकी है। 1980 के दशक तक, हम पर्याप्त उत्पादन करने लगे थे। दिसंबर 1994 में फैक्ट्री के कर्मचारियों की संख्या 150 से अधिक थी और कुल संपत्ति 80 लाख से अधिक की थी। इस सामूहिक उपक्रम की वार्षिक आय 20 लाख आर. एम.बी. से अधिक है।

दिसंबर 1994 में उच्च सरकारी अधिकारियों ने झाङ पिङ-आन को हमारी फैक्ट्री के नौकशाहाना तरीके से प्रबंधन के लिए भेजा, लेकिन हमारे उपक्रम के उत्पादन में निरंतर सुधार के बजाय, उनकी कुछ और ही योजनाएं थीं।। उन्होंने अपनी खुद की जेबें भरने के लिए गोपनीय तरीके से हमारी फैक्ट्री की परिसंपत्तियों का इस्तेमाल करके एक अन्य फैक्ट्री निर्मित की। हमारे फैक्ट्री द्वारा तैयार ट्रक और अन्य वाहन न्यूनतम कीमतों पर उनके रिश्तेदारों को बेच दिए गए। उन्होंने फैक्ट्री की परिसंपत्यिों का इस्तेमाल करके अपने मजे के लिए एक बेशकीमती कार खरीदी और वास्तव में 4080 ग्राम सोना चुरा कर अपने गांवा में भिजवा दिया। उन्होंने हमारी फैक्ट्री में बने कुछ उत्पाद मुफ्त में दे दिए, और पार्टी के दो शाखा सचिवों और ट्रेड यूनियन के अध्यक्ष को इस्तीफा देने के लिए मजबूर कर दिया। तकनीकी विभाग, विपणन विभाग और भंडारगृह के सुरक्षा गार्ड सभी को उन्होंने निरस्त कर दिया, और अलग-अलग बहाने बना कर उपक्रम के 90 प्रतिशत से अधिक कर्मचारियों को निकाल दिया। यहां तक की सुरक्षा विभाग और प्रवेश द्वारा के सभी गार्डों को निकाल कर अपने रिश्तेदारों और घरेलू नौकरों की भर्ती कर दी। उन्होंने हमारी शानदार फैक्ट्री को तबाह कर दिया और उसे खोखला बना दिया, लेकिन निम्न और गरीब परिवार से ताल्लुक रखते हुए भी इस क्षेत्र केसबसे अमीर लोगों में शुमार हो गए। उन्होंने शहर में दो बड़े मकान खरीदे और अपने गांव के मकानों को पुनर्निमाण करा, और अपने लिए अनेक घरेलू नौकर नियुक्त किए।

उपक्रम के पूर्व-कर्मचारी न केवल उन भत्तों से वंचित हो गए जिसके वे अधिकारी थे, बल्कि उन्हें किसी प्रकार की सामाजिक सुरक्षा भी प्राप्त नहीं हुई। क्योंकि श्री झाङ कर्मचारियों को मिलने वाली जरूरतों को पूरा करने में असमर्थ हैं, इसलिए मजदूरों ने सरकार के उच्च अधिकारियों से दूसरा प्रबंधक भेजने की मांग की। कई बार संपर्क किए जाने के बाद प्रांतीय सरकार ने घोषणा की कि हम अपना फैक्ट्री प्रबंधक खुद चुन सकते हैं, और इसे औपचारिक रूप देने के लिए 2004 में संख्या 93 का दस्तावेज जारी किया। यह दस्तावेज स्पष्ट करता है कि फैक्ट्री कर्मचारियों द्वारा वैधानिक तरीके से दूसरा प्रबंधक चुने जाने पर, पुराने प्रबंधन को बर्खास्त कर दिया जाएगा और वापिस बुला लिया जाएगा।

लेकिन चुनाव से तीन दिन पहले, सरकार ने तीन दिन में लोकतांत्रिक तरीके से चुनाव कराने की प्रक्रिया के "पर्यवेक्षण" के लिए कुछ लोगों को भेज दिया। इन स्थितियों में नवंबर 2004 में चुनाव हुआ और हम लोगों के फैक्ट्री का नया प्रबंधक चुना। लेकिन चुनाव के परिणाम उच्च अधिकारियों के पास भेजे जाने पर प्रांतीय सरकार ने उसे मान्यता देने से इंकार कर दिया। इसके बाद दो बार चुनाव हुए लेकिन नतीजा वही ढाक के तीन पात रहा। प्रबंधक ने भी इस्तीफा देने की हमारी मांग को अनसुना कर दिया और कहा कि सरकार की तरफ से ऐसा कोई आदेश नहीं है।

...राज्य के भ्रष्टाचार की रोकथाम संबंधी विभाग में शिकायत की गई। मीडिया से संपर्क किया गया। 7 जुलाई को मैं हमारे फैक्ट्री के मजदूरों के साथ प्रांतीय सरकार के पास हमारे मामले को लेकर गया लेकिन वहां से हमें राजकीय पूंजीगत परिसंपत्तियों की प्रांतीय समिति के पास भेज दिया गया।. ..इसके बाद 18 जुलाई को, प्रांत के पार्टी सचिव और प्रांत के गवर्नर के प्रत्यक्ष आदेश के तहत, राजकीय पूंजीगत परिसंपत्तियों की प्रांतीय समिति हमारे मामले की सुनवाई के लिए हमारी फैक्ट्री में आयी और अपनी आधिकारिक रिपोर्ट में हमारे आरोपों को सही ठहराया। साथ ही, हमारे द्वारा किए गए चुनाव को उचित वैधानिक प्रक्रियाओं के अनुसार किए गए चुनाव घोषित किया।

इसके बावजूद 9 नवंबर 2005 को प्रांतीय सरकार के पार्टी सचित श्री तिआन कुछ लोगों के साथ फैक्ट्री में आए और हमको खुलेआम धमकाया। उन्होंने कहा कि प्रांतीय सरकार अब भी श्री झाङ का समर्थन करती है और उन्होंने श्री झाङ के प्राधिकार को स्वीकार करने के लिए मजबूर करने की कोशिश की। लेकिन हमारे मजदूरों ने झुकने से इंकार कर दिया।

श्री झाङ ने 3 दिसंबर को, प्रांतीय सरकार के प्रत्यक्ष आदेश के तहत फैक्ट्री के उस ऊर्जा वितरण को काट दिया जो खुद हमारे मजदूरों ने तैयार किया था, ताकि पानी और बिजली की आपूर्ति पूरी तरह कट जाए और फैक्ट्री का समूचा उत्पादन ठप हो जाए।

जनवरी 2006 में, मैं अनेक मजदूर प्रतिनिधियों के साथ बीजिंग के राज्य विभाग में गया। वहां राजकीय पूंजीगत परिसंपत्तियों की समिति के निदेशक वाङ ने कहा कि हम वापिस चले जाएं, ज़िआन पश्चिमी विद्युत कॉरपोरेशन के निर्देश के तहत, हमें अलग होने की आधिकारिक प्रक्रिया पूरी करने की अनुमति दी जाएगी, जिसके बाद हमें फैक्ट्री के प्रबंधन का अधिकार मिल जाएगा। इसके बाद हम पश्चिमी विद्युत कॉरपोरेशन गए, लेकिन उन्होंने हमारी कोई बात नहीं सुनी और इस लिए श्री झाङ पिङ-आन पहले से कहीं अधिक आक्रामक हो गए।

शंघाई में कारख़ाना मज़दूरों का प्रदर्शन

6 सितंबर 2006 में प्रांतीय सरकार के सुरक्षा विभाग के प्रमुख कई सुरक्षा गार्डों के साथ आए और यह कहते हुए फैक्ट्री के मुख्य दरवाजे को तोड़ दिया कि वे काम पर आए मजदूरों को गिरफ्तरी कर लेंगे, लेकिन उन्हें हमारे मजदूरों ने खदेड़ दिया।

12 सितंबर 2006 को, ज़िआन शहर के पुलिस विभाग ने अपनी शक्ति का प्रदर्शन करने के लिए और हमारे मजदूरों को धमकाने के लिए "कानून और व्यवस्था कायम" करने के नाम पर दंगारोधी पुलिस तैनात कर दी, हमारी कर्मचारी ने कानूनी तरीके से उन्हें दोबारा खदेड़ दिया।

समय बीतने के साथ ही और तानाशाही सत्ता के निरंतर दबाव में तथा उनकी "फूट डालो, शासन करो" की नीति, साथ ही साथ प्रांतीय सरकार से लगातार मिल रही धमकियों के चलते अधिकांश मजदूरों ने अंतत: "हारकर घुटने टेक दिए" क्योंकि उनके पास कोई और विकल्प नहीं था और अपने पदों से इस्तीफा देकर घर बैठ गए। लेकिन उनके दिलों में अब भी रोष की भावनाएं बलवती हैं।

...इस समय तक पांच मजदूर अब भी फैक्ट्री में थे कि उन्हें उम्मीद थी कि राज्य के सामूहिक परिसंपत्तियों को बलपूर्वक छीन लेने वालों को दंड मिलेगा, और प्रबंधन के खिलाफ अदमनीय संघर्ष जारी रखे हुए थे।

23/8/07 को श्री झाङ ने लोगों के एक और दल के साथ फैक्ट्री के मुख्य प्रवेश द्वारा के ताले तोड़ दिए और बलपूर्वक फैक्ट्री पर कब्जा कर लिया। संघर्ष में अंतत: हमारी हार हुई और हमें प्रांतीय या केंद्र सरकार से कोई सहायता नहीं मिली। उन्होंने हम सबको फैक्ट्री से खदेड़ दिया और मजदूरों द्वारा उत्पन्न कई मिलियन आर.एम.बी. की परिसंपत्ति पर श्री झाङ का कब्जा हो गया। अब हमारा संघर्ष केवल यहीं तक सिमट कर रह गया है कि कई लोग श्री झाङ से सामाजिक सुरक्षा के उनके अधिकार देने की मांग कर रहे हैं। कहा जा रहा है कि बीजिंग में कई लोग हैं जिन्हें ऐसी ही स्थितियों का सामना करना पड़ा है।

... यह एकदम स्पष्ट है यहां व्यक्तियों के बुनियादी अधिकारों की गारंटी नहीं दी जा सकती , और अनेक मासूम पुरुषों और महिलाओं को प्रताड़ित किया जाता है या आपराधिक दंड तक दिया जाता है। यह एक बेहद गंभीर स्थिति है और एक व्यवस्था की विफलता है...

...

ज़िआन रेक्टिफिकेशन-ट्रांसफॉर्मर फैक्ट्री के मजदूरों का एक प्रतिनिधि

नताशा – एक महिला बोल्शेविक संगठनकर्ता

एक संक्षिप्त जीवनी (चौथी क़िश्त)

एल. काताशेवा

रूस की अक्टूबर क्रान्ति के लिए मज़दूरों को संगठित, शिक्षित और प्रशिक्षित करने के लिए हज़ारों बोल्शेविक कार्यकर्ताओं ने बरसों तक बेहद कठिन हालात में, ज़बरदस्त क़ुर्बानियों से भरा जीवन जीते हुए काम किया। उनमें बहुत बड़ी संख्या में महिला बोल्शेविक कार्यकर्ता भी थीं। ऐसी ही एक बोल्शेविक मज़दूर संगठनकर्ता थीं नताशा समोइलोवा जो आख़िरी साँस तक मज़दूरों के बीच काम करती रहीं। इस अंक से हम 'बिगुल' के पाठकों के लिए उनकी एक संक्षिप्त जीवनी का धारावाहिक प्रकाशन कर रहे हैं। हमें विश्वास है कि आम मज़दूरों और मज़दूर कार्यकर्ताओं को इससे बहुत कुछ सीखने को मिलेगा। – सम्पादक

महिला मज़दूरों के बीच काम और अन्तरराष्ट्रीय महिला दिवस के आयोजन की तैयारी

महिला मजदूरों के साथ विशेष रूप से नताशा ने संगठनकर्ता का उत्कृष्ट गुण प्रदर्शित किया। उन्होंने रूस में पहले अन्तरराष्ट्रीय महिला दिवस समारोह के आयोजन में अग्रणी भूमिका निभायी। यह रोचक तथ्य है कि नताशा के *प्रावदा* से जुड़ने के बाद अखबार के दफ्तर में औरतों की आवाजाही बढ़ गयी थी। दफ्तर के अपने छोटे-से कमरे में बैठ कर वह मेहनतकशों के आम आन्दोलन से औरतों को जोड़ने की योजनाएँ बनाती रहती थीं।

रूस की कामकाजी औरतों को अन्तरराष्ट्रीय महिला दिवस की जानकारी 1913 में मिली और उस दिन से कमोबेश नियमित रूप से इसका आयोजन शुरू हुआ। कामकाजी औरतों ने दुनिया भर की अपनी जैसी दूसरी कामरेडों के साथ हमदर्दी महसूस की। उन्होंने यह समझना शुरू किया कि गरीबी और किल्लत से औरतों को तभी छुटकारा मिल सकता था जब मेहनतकश वर्ग पूँजीपति वर्ग के खिलाफ अपने संघर्ष को निर्णायक जीत के मुकाम पर पहुँचाये। बहरहाल, हमें आन्दोलन पर हावी रहने के लिए मेंशेविकों से लड़ना था क्योंकि वे उसे पूँजीवादी पार्टियों के वर्चस्व के आधीन करने की कोशिश कर रहे थे।

समोइलोवा ने पहले अन्तरराष्ट्रीय महिला दिवस के आयोजन के पार्टी के महती कार्य में अग्रणी भूमिका निभायी। महिला मजदूरों ने इस दिन को अपने दिन, अपनी वर्गीय चेतना को जागृत करने और अन्तरराष्ट्रीय भाईचारे की समझ के स्तर तक अपने दायरे को बढ़ाने के लिए तय किये गये एक खास दिन के रूप में स्वीकार किया। नताशा ने अपना सृजनात्मक प्रयास विशेष रूप से हमारे पार्टी के निर्माण की इस शाखा को समर्पित किया।

क्रान्तिकारी काम के बरसों के अनुभव से सम्पन्न एक बोल्शेविक के तौर पर नताशा ने इस काम को बोल्शेविक ढंग से अंजाम दिया। इस काम के आयोजन की योजना पर विचार करते हुए उन्होंने इस मुद्दे पर सावधानी से काम किया। इस मामले पर *प्रावदा* के कामरेडों से वे अक्सर सलाह लेतीं और काम को इस प्रकार संचालित करतीं ताकि वह क्रान्तिकारी वर्ग संघर्ष की मुख्यधारा को मजबूत करे।

समोइलोवा अपने कामरेडों के साथ महिलाओं की एक पत्रिका के प्रकाशन के सवाल पर अक्सर चर्चा किया करती थीं। इस समय रूस के मजदूर आन्दोलन के आम तौर पर पुनर्जीवित होने का प्रमाण आन्दोलन में कामकाजी महिलाओं की बढ़ती दिलचस्पी से भी मिल रहा था। उन्होंने यूनियनें बनायीं, हड़ताली आन्दोलनों में, बीमा आन्दोलनों में हिस्सा लिया, अखबार में लिखा, मई दिवस के प्रदर्शनों में शामिल हुईं। महिला आन्दोलन पर पर्याप्त ध्यान दे पाना *प्रावदा* के लिए असम्भव था। महिलाओं की पत्रिका *वूमेन वर्कर* का प्रकाशन समोइलोवा की चिर संचित अभिलाषा थी। आगे चल कर उनका यह सपना साकार हुआ, और कहा जा सकता है कि समोइलोवा को उनका असली कार्यक्षेत्र मिल गया; उन्होंने अपनी सारी ऊर्जा को महिला आन्दोलन पर केंद्रित कर दिया। और इस काम में महिलाओं की उत्कृष्ट संगठनकर्ता और आन्दोलनकर्ता, जैसा कि समोइलोवा ने क्रान्ति के बाद अपने आप को सिद्ध किया, के रूप में विकास किया और आगे बढ़ीं।

प्रावदा के ग़ैरकानूनी काम के दौरान और क्रान्ति के बाद महिला सम्मेलनों में जिन्होंने समोइलोवा को देखा था, उनके समक्ष स्पष्ट था कि समोइलोवा की असली रुचि इसी काम में थी, यही उनका मूल तत्व था।

महिला मजदूरों के सवाल पर पार्टी के एक निर्णय पर पहुँचने के बाद नताशा पार्टी में पहले से ही शामिल महिला मजदूरों के एक समूह और अनेक बोल्शेविक कामरेडों (एसएम पोज्नर, पीएफ कुंदेली और अन्य) के साथ पूरे उत्साह से महिला दिवस की तैयारियों में जुट गयीं।

जनवरी 1913 में उदार बुद्धिजीवियों के एक पूँजीवादी समूह ने महिलाओं की शिक्षा पर एक अधिवेशन का आयोजन किया था जिसमें कुछ चुनिन्दा महिला कार्यकर्ताओं को ही शामिल होने की अनुमति दी गयी थी। इस अधिवेशन में मुख्य रूप से 'पुरुष वर्चस्व' के मुद्दे पर ही चर्चा की गयी। *प्रावदा* ने इस सम्बन्ध में लिखा कि इस अधिवेशन में नहीं बल्कि *प्रावदा* की ओर से आयोजित अन्तरराष्ट्रीय महिला दिवस के आयोजन से बड़े नतीजे सामने आयेंगे और महिलाओं की असली आवाज सुनी जायेगी।

महिला मजदूरों को संबोधित *प्रावदा* का पहला लेख जुझारू मजदूर वर्ग की कतारों से जुड़ने, अन्तरराष्ट्रीय क्रान्तिकारी मजदूर आन्दोलन के शक्तिशाली झंझावात का हिस्सा बनने के लिए रूसी महिलाओं का भावनात्मक आह्वान था।

इस लेख के बाद *प्रावदा* ने अपने लेखों में सिलसिलेवार मुहिम चलायी। अन्तरराष्ट्रीय महिला दिवस के कामों और उसके आयोजन के तौर-तरीके पर लेखों की एक श्रृंखला छपी ताकि रूसी महिला मजदूर इसे अपना दिन महसूस करें। लेकिन पहला अन्तरराष्ट्रीय महिला दिवस हमारी ताकत का आकलन करने के एक अवसर के रूप में भी देखा गया।

इस उद्देश्य से *प्रावदा* ने "महिलाओं के काम" पर एक स्तम्भ चलाया। 'एक वैज्ञानिक सामाजिक ग्रंथालय, महिला श्रम और स्त्री प्रश्न' शीर्षक से बहुत सी सामग्री प्रकाशित की गई। विभिन्न फैक्टरियों और उद्योगों की विभिन्न शाखाओं में महिलाओं की दशा पर *प्रावदा* में एक प्रश्नावली छापी गयी। इसी तरह प्रावदा ने बहुत-सी सोसाइटियों और मजदूर संगठनों (सिलाई के पेशे से जुड़े मजदूरों, कपड़ा उद्योग के मजदूरों वगैरह) से महिला मजदूरों की दशाओं की तफ्तीश और अध्ययन करने और अपने आँकड़े *प्रावदा* को भेजने का अनुरोध किया। सारा ध्यान औरतों की वर्ग स्थिति, उद्योग में उनकी स्थिति, वगैरह पर केन्द्रित था। जैसे-जैसे सामग्री आने लगी तो 'महिलाओं के काम' वाला स्तम्भ और 'अन्तरराष्ट्रीय महिला दिवस' के लिए एक नया खण्ड *प्रावदा* में और जल्दी-जल्दी छपने लगे।

पूँजीवादी हमले के खिलाफ विकसित हो रहे वर्ग संघर्ष ने, जो प्रतिक्रिया के इस दौर में तथाकथित तीन जून दूमा की संवैधानिक स्थितियों के अनुरूप बहुत ही सफलतापूर्वक ढाला गया था, महिलाओं के स्तम्भ के लिए पर्याप्त स्पष्ट और ठोस सामग्री उपलब्ध करायी। कपड़ा मिलों में भी तालाबन्दियाँ होने लगीं। आने वाले संकट के चलते मजदूरी में कटौती होने लगी, और औरतों से अपमानजनक तरीके से "सड़कों पर जाकर अतिरिक्त कमाई करने" को कहा गया। लाफेर्मे फैक्टरी की आठ सौ औरतें हड़ताल पर चली गयीं।

समोइलोवा ने यह सारी सामग्रियाँ जमा की और "महिलाओं के स्तंभ" के अलावा उन्होंने बहुत-से लेख लिखे जो इस मुद्दे पर इस तरह ध्यान केन्द्रित करते थे जो महिलाओं को दिलचस्प लगता था – हड़तालों के नतीजे और जीवनयापन के खर्च हुई वृद्धि के खिलाफ संघर्ष में उनकी भूमिका, महिलाओं से संबंधित मुद्दों पर सरकारी खिलवाड़ और फैक्टरियों में महिला फैक्टरी निरीक्षकों की नियुक्ति सम्बन्धी विधेयक लाने की उसकी मंशा।

महिलाओं को अपने संगठनों की ओर खींचने की नियोक्ताओं की कोशिशों ने नताशा को एक उत्तेजक लेख लिखने के लिए उकसाया जिसमें उन्होंने महिलाओं का अपने वर्ग के संगठनों, यानी ट्रेड यूनियनों से जुड़ने का आह्वान किया।

साथ ही साथ पार्टी की भूमिगत महिला कार्यकर्ताओं द्वारा गुप्त रूप से तैयारी का ठोस काम अंजाम दिया जा रहा था। बहुत-सी महिलाएँ, जो बोल्शेविक पार्टी की कार्यकर्ताएँ थीं, बैठकों, ट्रेड यूनियनों, क्लबों और विभिन्न मजदूर समितियों से *प्रावदा* द्वारा जुटायी सामग्रियों का इस्तेमाल रिपोर्टें तैयार करने और सक्रिय महिला मजदूरों के बीच से (अलेक्सेयेवा, एक बुनकर, पावलोवा, इत्यादि) वक्ता तैयार करने के लिए करती थीं, जो पहले ही विख्यात हो चुकी थीं। नताशा इस काम में सक्रिय हिस्सेदारी करती थीं। इस तरह पहले अन्तरराष्ट्रीय महिला दिवस पर महिला मजदूरों ने सीधे फैक्टरियों के जीवन से ली गयी ठोस सामग्री के आधार पर स्पष्ट और प्रभावशाली भाषण दिये। उन्होंने महिला मजदूरों के शोषण की गहनता का खुलासा किया और बताया कि किस प्रकार महिला मजदूर दोहरे उत्पीड़न की शिकार थीं और उन नाममात्र के अधिकारों से भी वंचित थीं जो पुरुष मजदूरों को हासिल थे।

फरवरी 23 (नये कैलेण्डर के अनुसार मार्च 8) आ पहुँचा। प्रावदा द्वारा चलाये गये आन्दोलन के कारण मजदूर वर्ग के दुश्मन हरकत में आने को विवश हो गये थे। उदारवादियों के एक समूह, जो *विमेंस हेरल्ड* का प्रकाशन करता था, ने *प्रावदा* के खिलाफ गाली-गलौच का अभियान छेड़ दिया और घोषणा की कि पीपुल्स यूनिवर्सिटी भी महिला दिवस का आयोजन करेगी।

समोइलोवा ने इन नारीवादियों का अत्यन्त भावप्रवण जवाब दिया और महिला मजदूरों की ओर से विश्वासपूर्वक कहा कि उन्होंने अन्तरराष्ट्रीय महिला दिवस के आयोजन में भाग लेने का पक्का निश्चय कर लिया है। *विमेंस हेरल्ड* के हमले ने स्पष्ट कर दिया कि बोल्शेविकों ने महिला मजदूरों बहुतायत को संगठित करने की जो रणनीति अपनायी थी वह पूरी तरह क्रान्तिकारी मार्क्सवाद के सिद्धान्तों और विचारधारा के अनुरूप थी।

पहले अन्तरराष्ट्रीय महिला दिवस के लिए नियत तारीख 23 फरवरी 1913 को रविवार का दिन था। इस दिन सभा करने के लिए पुलिस की अनुमति लेने के लिए (4 मार्च 1906 के अन्तरिम नियमों के अनुसार) बैठकों को "*साइंटिफिक मैटिनीज*" का नाम देने का निश्चय किया गया।

यह दिन जैसे-जैसे करीब आता जा रहा था उसे लेकर पुरुष और महिला मजदूरों की बढ़ती दिलचस्पी के बारे में जानने के लिए *प्रावदा* के 1913 के अंक देखना शिक्षाप्रद होगा। सबसे पहले एक मजदूर (या शायद कोई महिला मजदूर जो अपना नाम देते हुए डरती है) महिला मजदूरों की कठिन परिस्थितियों, कम वेतनमान, उस गुस्से के बारे में लिखता है जिसे एक अच्छी दिखने वाली महिला मजूदर को फोरमैन के कारण भुगतना पड़ता है, इत्यादि। इसके कुछ दिन बाद उसी फैक्टरी की एक महिला मजदूर लिखती है (जाहिर है कि वह नताशा के दफ्तर जा चुकी है)। पहले हम प्रतिरोध के शब्द पढ़ते हैं और उसके बाद हड़ताल की सूचना आती है।

महिला मजदूरों के नये संस्तर लगातार शामिल किये जा रहे थे; पहले कपड़ा उद्योग के मजदूर, उसके बाद सिलाई व्यापार के मजदूर, धुलाई करने वाली औरतें और कपड़ा बेचने वाली औरतें, वगैरह।

लम्बे समय तक रबड़ उद्योग की महिला मजदूर आन्दोलन से बाहर रहीं। हालांकि, 1914 में ट्राइऐंगल रबड़ फैक्टरी और रबड़ उद्योग की दूसरी फैक्टरियों में बड़े पैमाने पर विषाक्तता की कई घटनाओं ने न सिर्फ सेण्ट पीटर्सबर्ग बल्कि समूचे रूस के सर्वहारा को क्रोध से भर दिया।

सबसे पहले औरतों को मजदूर बीमा अधिनियम के तहत दुर्घटनाओं के लिए बीमा कराने के लिए प्रेरित किया गया। चूँकि यह उन्हें संगठित करने का एक जरिया था। लेकिन औरतों ने ऐसा करने से मना कर दिया और उन्होंने बीमा के फार्म फाड़कर फेंक दिये। उन्होंने ऐसा इसलिए नहीं किया कि उनकी स्थिति दूसरे उद्योगों की औरतों से बेहतर थी बल्कि इसलिए कि धुएँ भरी फैक्टरियों में ओवर टाइम करके वे प्रति दिन अस्सी कोपेक से एक रूबल तक कमा लेती थीं जबकि कपड़ा उद्योग के मजदूर ज्यादा से ज्यादा साठ कोपेक कमाते थे और औसत मजदूरी बारह रूबल मासिक बनती थी। लेकिन अन्तरराष्ट्रीय महिला दिवस के आयोजन की सफलता ने उनका रवैया बदल दिया। पूँजी के इन गुलामों ने भी अपने मालिकों की फरमाबरदारी से इनकार कर दिया। उन्होंने प्रतिरोध करना शुरू कर दिया और हड़ताल की धमकी देने लगीं। इससे प्रबन्धन हक्का-बक्का रह गया और खीझ उठा।

समोइलोवा ने भावुकता और गहन और निरन्तर बढ़ते उत्साह से देखा कि *प्रावदा* की देखभाल और सरोकार की बदौलत एक नयी क्रान्तिकारी सेना तैयार हो रही थी, युगों से दबी-कुचली और गुलाम महिला मजदूर जाग रही थीं:

खुशी और जीवन से भी वंचित,
लम्बे समय तक तुमने पहनीं
गुलामी की जंजीरें,
लंबे समय तक तुमने पराजय में रखा
अपना सिर झुकाये,
लंबे समय तक तुम जीती रहीं
अज्ञान के अँधेरे में,
लंबे समय तक तानाशाहों ने उड़ाया
तुम्हारा मज़ाक,
तुम्हारी कमजोरी से होकर निर्भय...

लेकिन तिलिस्म टूट चुका है।
जीवन की किताब में हम लिखेंगे
तुम्हारी विजय-गाथा।
साहस के साथ बढ़ो आगे, महिला मजदूरों।
अपना मार्ग आलोकित कर दो
मुक्ति की मशाल से।

जान लो कि पुरुष मजदूर देंगे तुम्हारा साथ,
इस कठिन और महान संघर्ष में।

– इल्या वोलोदिंस्की

(1913-14 के अन्तरराष्ट्रीय महिला दिवस को समर्पित एक सर्वहारा कविता। यह कविता छापने के लिए *वूमन वर्कर* पत्रिका को ज़ब्त कर लिया गया था (अंक 3, 1914))

प्रावदा और समोइलोवा का काम अपेक्षाओं से कहीं बढ़कर सफल रहा। 23 फरवरी को, पुलिस को अचंभित करते हुए "साइंटिफिक मैटिनी" में सभी पेशों और उद्योगों से जुड़ी महिला मजदूरों ने हिस्सा लिया, जो क्रान्तिकारी महिला मजदूरों की एक विशाल सेना थी। **(अगले अंक में जारी)**

जन्मतिथि (9 अप्रैल) और पुण्यतिथि (14 अप्रैल) के अवसर पर

ग़रीब किसानों और मज़दूरों के 'राहुल बाबा'

राहुल सांकृत्यायन, जिन्हें ग़रीब किसान और मज़दूर प्यार से राहुल बाबा बुलाते थे, एक चोटी के विद्वान, कई भाषाओं और विषयों के अद्भुत जानकार थे, चाहते तो आराम से रहते हुए बड़ी-बड़ी पोथियाँ लिखकर शोहरत और दौलत दोनों कमा सकते थे परन्तु वे एक सच्चे कर्मयोद्धा थे। उन्होनें आम जन, ग़रीब किसान, मज़दूर की दुर्दशा और उनके मुक्ति के विचार को समझा। उनके बीच रहते हुए उन्हें जागृत करने का काम किया और संघर्षों में उनके साथ रहे। वे वास्तव में जनता के अपने आदमी थे।

उन तमाम लेखकों व बुद्धिजीवियों से अलग जो अपने ए.सी. कमरे में बैठकर दुनिया और उसमें घटनेवाली घटनाओं की तटस्थ व्याख्या करते हैं, जनता की दुर्दशा की और सामाजिक बदलाव की बस बड़ी-बड़ी बातें करते हैं या पद-ओहदा-पुरस्कार की दौड़ में लग रहते हैं, राहुल ने अपनी प्रतिभा का इस्तेमाल समाज को बदलने के लिए जनता को जगाने में किया। इसके लिए उन्होंने सीधी-सरल भाषा में न केवल अनेक छोटी-छोटी पुस्तकें और सैकड़ों लेखे लिखे, बल्कि लोगों के बीच घूम-घूमकर गुलामी और अन्याय के ख़िलाफ़ संघर्ष के लिए उन्हें संगठित भी किया।

पूर्वी उत्तर प्रदेश के आज़मगढ़ ज़िले में एक पिछड़े गाँव में जन्मे राहुल के मन में बचपन से ही उस ठहरे हुए और रुढ़ियों में जकड़े समाज के प्रति बग़ावत की भावना घर कर गयी और विद्रोह-स्वरूप वे घर से भाग गये। 13 साल की उम्र में एक मन्दिर के महन्त बने, फिर आर्यसमाजी बनकर समाज में रूढ़ियों और मानसिक गुलामी के ख़िलाफ़ अलख जगायी लेकिन भारतीय समाज के सदियों पुराने गतिरोध, अन्धविश्वास, कूपमण्डूकता और जाति-पाँति जैसी सामाजिक बुराइयों को लेकर उनके विद्रोही मन में बेचैनी बढ़ती रही और उन्हें लगने लगा कि आर्यसमाज इन सवालों को हल नहीं कर सकता। उन्होंने बौद्ध धर्म अपना लिया लेकिन दुनिया-समाज में बराबरी और न्याय क़ायम करने का रास्ता उसके पास भी नहीं था। राहुल को अपने सभी सवालों का जवाब बौद्ध धर्म से भी न मिल पाया। समानता और न्याय पर टिके तथा हर प्रकार के शोषण और भेदभाव से मुक्त समाज बनाने की राह खोजते हुए वे मार्क्सवादी विचारधारा तक पहुँचे। उन्होंने गेरुआ चोगा उतारकर मज़दूरों-किसानों के लिए लड़ने और उनके दिमाग़ों पर कसी बेड़ियों को तोड़ डालने को अपने जीवन का लक्ष्य बना लिया। उन्होंने समझ लिया कि – "साम्यवादी समाज का आर्थिक निर्माण नयी तरह से करना चाहते हैं और वह निर्माण रफ़ू या लीपापोती करके नहीं करना होगा। एक तरह से उसे नयी नींव पर दीवार खड़ी करके करना होगा। भारत की साधारण जनता की ग़रीबी इतनी बढ़ी हुई है कि उसके लिए अनन्त की ओर इशारा नहीं किया जा सकता। हमें अपने काम में तुरन्त जुट जाना चाहिए।"

उनका स्पष्ट मानना था कि – "जनता के सामने निधड़क होकर अपने विचार को रखना चाहिए और उसी के अनुसार काम करना चाहिए। हो सकता है, कुछ समय तक लोग आपके भाव न समझ सकें और ग़लतफ़हमी हो, लेकिन अन्त में आपका असली उद्देश्य हिन्दू-मुसलमान सभी ग़रीबों को आपके साथ सम्बद्ध कर देगा।"

और आम ग़रीबों से अपने को जोड़ने तथा रूढ़ियों व परम्पराओं पर प्रचण्ड प्रहार करने के लिए राहुल जी ने आम लोगों की बोलचाल की भाषा में 'भागो नहीं दुनिया को बदलो', 'दिमाग़ी गुलामी', 'तुम्हारी क्षय', 'नइकी दुनिया', 'मेहरारुन के दुरदसा', 'साम्यवाद ही क्यों' जैसी छोटी-छोटी किताबें लिखकर लोगों को जागृत करने का काम शुरू कर दिया। साथ-साथ उन्होंने गाँव-गाँव घूमकर किसानों और ग़रीबों को जगाना और अंग्रेज़ हुकूमत तथा ज़मींदारों के ख़िलाफ़ लड़ने के लिए संगठित करना भी शुरू किया। कई बार उन्हें जेल में डाला गया लेकिन वहाँ भी वे लगातार लिखते रहे। उनकी कई किताबें तो अलग-अलग जेलों में ही लिखी गयीं।

राहुल दूर तक देख सकते थे इसलिए उन्होंने यह समझ लिया था कि भारतीय समाज की तर्कहीनता, अन्धविश्वास सदियों पुराने गतिरोध, कूपमण्डूकता आदि पर करारी चोट करके ही आगे बढ़ाया जा सकता है। आज़ादी के आन्दोलन में जब धर्म का प्रवेश हुआ था, तभी राहुल ने इस बात को पहचान लिया था कि धार्मिक बँटवारे पर चोट करना बेहद ज़रूरी है। उन्होंने सभी धर्मों में व्याप्त कुरीतियों का ही विरोध नहीं किया बल्कि स्पष्ट रूप से बताया कि धर्म आज केवल जनता को बाँटने और शासकों की गद्दी सलामत रखने का औजार बन चुका है। उन्होंने खुले शब्दों में कहा – "धर्मों की जड़ में कुल्हाड़ा लग गया है और इसलिए अब मज़हबों के मेल-मिलाप की बातें भी कभी-कभी सुनने में आती हैं। लेकिन, क्या यह सम्भव है? 'मज़हब नहीं सिखाता आपस में बैर रखना' – इस सफ़ेद झूठ का क्या ठिकाना। अगर मज़हब बैर नहीं सिखलाता तो चोटी-दाढ़ी की लड़ाई में हज़ार बरस से आजतक हमारा मुलक पागल क्यों है? पुराने इतिहास को छोड़ दीजिये, आज भी हिन्दुस्तान के शहरों और गाँवों में एक मज़हब वालों को दूसरे मज़हब वालों के ख़ून का प्यासा कौन बना रहा है? असल बात यह है – 'मज़हब तो है सिखाता आपस में बैर रखना। भाई को है सिखाता भाई का ख़ून पीना।' हिन्दुस्तान की एकता मज़हबों के मेल पर नहीं होगी, बल्कि मज़हबों की चिता पर।"

किसानों की लड़ाई लड़ते हुए भी राहुल ने इस बात को नहीं भुलाया कि केवल अंग्रेज़ों से आज़ादी और ज़मीन मिल जाने से ही उनकी समस्याओं का अन्त नहीं हो जायेगा। उन्होंने साफ़ कहा कि मेहनतकशों की असली आज़ादी साम्यवाद में ही आयेगी। उन्होंने लिखा, "खेतिहर मज़दूरों को ख़याल रखना चाहिए कि उनकी आर्थिक मुक्ति साम्यवाद से ही हो सकती है, और जो क्रान्ति आज शुरू हुई है, वह साम्यवाद पर ही जाकर रहेगी।"

वे बिना रुके काम में जुटे रहते। भारतीय समाज की हर बुराई, हर क़िस्म की दिमाग़ी गुलामी, हर तरह के अन्धविश्वास, तमाम ग़लत परम्पराओं पर वह चोट करना चाहते थे, उनके विरुद्ध जनता को शिक्षित करना चाहते थे। वे मेहनतकश लोगों से प्यार करते थे और उनके लिए अपना जीवन क़ुर्बान कर देना चाहते थे। जीवन छोटा था, काम बहुत अधिक था। सदियों से सोये भारतीय समाज को जगाना आसान नहीं था। बाहरी दुश्मन से लड़ना आसान था, लेकिन अपने समाज में बैठे दुश्मनों और ख़ुद अपने भीतर पैठे हुए संस्कारों, मूल्यों, रिवाज़ों के ख़िलाफ़ लड़ने के लिए लोगों को तैयार करना उतना ही कठिन था। राहुल को एक बेचैनी सदा घेरे रहती। कैसे होगा यह सब। कितना काम पड़ा है! वे एक साथ दो-दो किताबें लिखने में जुट जाते। ट्रेन में चलते हुए, सभाओं के बीच मिलने वाले घण्टे-आध घण्टे के अन्तराल में, या सोने के समय में भी कटौती करके वह लिखते रहे। लगातार काम करते रहने से उनका लम्बा, बलिष्ठ, सुन्दर शरीर जर्जर हो गया। पर वह रुके नहीं। यह सिलसिला तब तक चला जब तक मस्तिष्क पर पड़ने वाले भीषण दबाव से उन्हें स्मृतिभंग नहीं हो गया। याद ने साथ छोड़ दिया। आर्थिक परेशानी ने घेर लिया। पूरा इलाज भी नहीं हो सका और 14 अप्रैल 1963 को 70 वर्ष की उम्र में मज़दूरों-किसानों के प्यारे राहुल बाबा ने आँखें मूँद लीं। लेकिन उन्होंने जो मुहिम चलायी उसे आगे बढ़ाये बिना आज हिन्दुस्तान में इन्क़लाब लाना मुमकिन नहीं है। आज हमारे समाज को जिस नये क्रान्तिकारी पुनर्जागरण और प्रबोधन की ज़रूरत है, उसकी तैयारी के लिए राहुल सांकृत्यायन का जीवन और कर्म हमें सदैव प्रेरित करता रहेगा।

झुग्गीवालों की कहानी पर कोठीवाले मस्त!

या इलाही ये माजरा क्या है?

'स्लमडॉग मिलेनायर' फिल्म को दुनियाभर के पूँजीवादी मीडिया ने हाथोंहाथ लिया। जिस फ़िल्म को कुछ महीने पहले किसी देश में कोई वितरक दिखाने को तैयार नहीं था और केवल डीवीडी पर रिलीज़ करने की तैयारी थी, अचानक उस पर इनामों की बारिश होने लगी। जो झुग्गियाँ खाते-पीते मध्यवर्ग और ऊँचे तबके के लोगों को शहर पर "बदनुमा दाग़" जैसी लगती हैं, जिन पर बुलडोज़र चलवाकर उनमें रहने वाले मेहनतकश लोगों को शहरों के बाहरी सिरे पर धकेला जा रहा है, वे अचानक इतनी प्रिय कैसे हो गयीं कि सारे टीवी चैनल और अखबार झुग्गीवालों की इस कहानी पर फ़िदा हो गये?

अगर इस फ़िल्म के सन्देश को देखा जाये और दुनिया के हालात पर एक नज़र डाली जाये, तो झुग्गीवालों पर उमड़ते पूँजीवादी दुनिया के इस प्यार को समझना कठिन नहीं होगा।

फिल्म यह सन्देश देती है कि भयंकर बदहाली, अत्याचार, नारकीय हालात में रहते हुए भी ग़रीबों को इस व्यवस्था के भीतर ही अमीर बन जाने का सपना देखना नहीं छोड़ना चाहिए। रोज़-रोज़ शोषण, अभाव और अपमान की ज़िन्दगी जीते हुए भी उन्हें यह उम्मीद पाले रखनी चाहिए कि एक न दिन इसी व्यवस्था के भीतर उनकी किस्मत का ताला खुल जायेगा और उनके दुख-दर्द दूर हो जायेंगे। फिल्म दिखाती है कि एक झुग्गी में रहने वाला बच्चा टीवी शो 'कौन बनेगा करोड़पति' में जीतकर करोड़पति बन जाता है। ढेरों अतार्किक परिस्थितियों और ग़लत तथ्यों से भरी यह फिल्म कला के नज़रिये से भी बेहद लचर है। झुग्गियों की ज़िन्दगी को इससे बेहतर ढंग से तो कई बॉलीवुड की फिल्में दिखा चुकी हैं।

2003 में संयुक्त राष्ट्र की एक रिपोर्ट के मुताबिक दुनिया की कुल शहरी आबादी का एक तिहाई यानी एक अरब से ज़्यादा लोग झुग्गियों में रह रहे थे। शहरों के फुटपाथों, पुलों के नीचे, स्टेशनों पर, रैनबसेरों में रहने वालों को भी जोड़ लिया जाये तो संख्या और भी ज़्यादा हो जायेगी। उसी रिपोर्ट में कहा गया था कि जिस रफ़्तार से गाँवों से उजड़कर लोग शहरों में आकर बस रहे हैं उसे देखते हुए 2025 तक झुग्गियों में रहने वालों की तादाद दोगुनी हो जायेगी। देशों की राजधानियों और महानगरों के इर्दगिर्द फैल रही इन झुग्गियों में रहने वाले पूँजी की दुनिया के मालिकों की ज़रूरत भी हैं और इनकी बढ़ती तादाद से उन्हें डर भी लग रहा है। उन्हें अपने कारख़ानों के लिए सस्ते मज़दूर चाहिए, अपने घरों में काम करने वाले नौकर-चाकर चाहिए, शहर की तमाम सारी ज़रूरतें पूरी करने वाले मेहनतकश चाहिए, इसलिए झुग्गियाँ तो बढ़ती रहेंगी। लेकिन साथ ही पूँजी की दुनिया के हित में दूर तक सोचने वालों को लगातार यह डर सता रहा है कि बर्बर शोषण, अमानवीय हालात और बदहाली में जीने वाली यह आबादी अगर लूट के इस राज के ख़िलाफ़ उठ खड़ी हुई तो क्या होगा! दुनिया के बहुत से शहरों में बीच-बीच में फूट पड़ने वाले ग़रीबों के आन्दोलन उनके इस डर को और बढ़ा देते हैं। वे अच्छी तरह समझते हैं कि ग़रीब मेहनतकशों की यह विशाल आबादी बारूद के ढेर की तरह है जो अगर फट पड़ा तो ग़रीबी के महासागरों के बीच बसे ऐशो-आराम के उनके टापू हवा में उड़ जायेंगे।

इसीलिए, ग़रीबों के दिलों में सुलगती बग़ावत की आँच पर पानी के छींटे डालने की कोशिशें तेज़ हो गयी हैं। विश्व बैंक से लेकर संयुक्त राष्ट्र तक शहरी ग़रीबों के बारे में चिन्तित हो उठे हैं। जवाहरलाल नेहरू शहरी पुनरुद्धार योजना जैसी स्कीमें दुनिया के कई देशों में लागू की जा रही हैं। 'स्लमडॉग मिलेनायर' को आसमान पर चढ़ाने के पीछे भी यही कोशिश है कि ग़रीबों को भरोसा दिलाया जाये कि नरक के दासों जैसी अपनी ज़िन्दगी से मुक्ति पाने के लिए उन्हें इस लूटतंत्र के ख़िलाफ़ विद्रोह के बारे में नहीं सोचना चाहिए। सिर झुकाकर अपना काम करते रहना चाहिए, लुटते-पिटते हुए हर हाल में खुश रहना चाहिए और उम्मीद करते रहना चाहिए कि किसी दिन उनकी भी लॉटरी लग जायेगी और वे भी "झुग्गी के कुत्ते" से करोड़पति बन जायेंगे। उनके बच्चों को अपराधी गिरोह भिखारी बनाने के लिए उठाते रहेंगे, उनके अंगों को निकालकर बेचते रहेंगे, पागल अमीरों की हवस पूरी करने के लिए उनके बच्चो-बच्चियों का अपहरण करते रहेंगे, लेकिन उन्हें इस बर्बर व्यवस्था को आग लगा देने के बजाय इसका शुक्रगुज़ार होना चाहिए – क्योंकि इन अनुभवों से गुज़रते हुए बच्चे बहुत-सी ऐसी बातें सीख जायेंगे जो आगे चलकर करोड़पति बनने में उनके काम आयेंगी।

यही है इस दो कौड़ी की फिल्म का सन्देश और यही है इसके महिमामण्डन का राज़।

– सत्यप्रकाश

"वर्ष 2030 तक दुनिया में शहरों की आबादी 5 अरब तक पहुँच जायेगी। इसका दो तिहाई से भी अधिक हिस्सा शहरी ग़रीबों का होगा। सभी देशों की सरकारों को इस समस्या को गम्भीरता से लेना होगा, वरना उन्हें गम्भीर सामाजिक असन्तोष और उथल-पुथल का सामना करने के लिए तैयार रहना होगा।"

– शहरीकरण पर संयुक्त राष्ट्र संघ की रिपोर्ट, 2003

पंजीयन संख्या 71980/99 | डाक पंजीयन संख्या SSP/LW-NP/399/2009-11 | प्रेषक डाकघर - महानगर | प्रेषण तिथि - माह की 13, 14, 15 तारीख

संसद-विधानसभाएँ बहसबाजों के अड्डे हैं
ये पूँजीवादी राज्यसत्ता के दिखाने के दाँत हैं
- पुलिस, फौज और जेल।
कोर्ट-कचहरी, कानून और अफसरशाही
इसके जबड़े और पंजे हैं।
चुनावी राजनीति के मायाजाल से बाहर आओ!
क्रान्तिकारी राजनीति की अलख जगाओ!!

इस पूरे ढाँचे का विकल्प क्या है?
पूंजीवाद का नाश
मौजूदा निजाम के खिलाफ आम
बगावत।
जुल्म के खिलाफ मेहनतकशों और आम
लोगों की एकता!
इंकलाबी संगठन का निर्माण!
समाजवाद के उसूलों पर, न्याय और
समता पर आधारित
एक नये भारत का निर्माण!

बिगुल मज़दूर दस्ता, नौजवान भारत सभा, दिशा छात्र संगठन और स्त्री मुक्ति लीग द्वारा चलाये जा रहे चुनावी भण्डाफोड़ अभियान के दौरान प्रदर्शित पोस्टर प्रदर्शनी से साभार

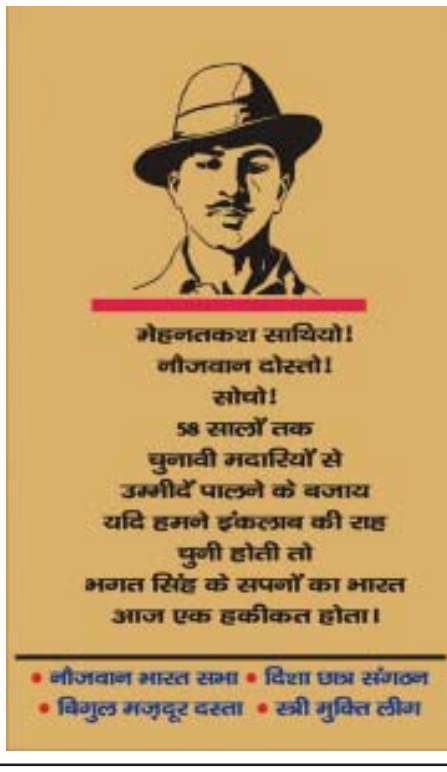

मुद्रक, प्रकाशक और स्वामी डा. दूधनाथ द्वारा 69, बाबा का पुरवा, निशातगंज, लखनऊ से प्रकाशित एवं उन्हीं के द्वारा वाणी ग्राफिक्स, अलीगंज, लखनऊ से मुद्रित। कम्पोजिंग: कम्प्यूटर प्रभाग, राहुल पक्काउण्डेशन, लखनऊ।
सम्पादक : डा. दूधनाथ, सुखविन्दर • सम्पादकीय पता : 69, बाबा का पुरवा, पेपरमिल रोड, निशातगंज, लखनऊ-226 020 • सम्पादकीय उपकार्यालय : जनगण होम्यो सेवासदन, मर्यादपुर, मऊ